मासिक

अरफात किरण

रायबरेली

रोज़ा – अल्लाह के लिये

"अल्लाह तआला ने रमज़ान में बड़ी विशेषताएं रखीं हैं। इसमें बड़ी बरकतें हैं। इसमें अल्लाह तआला की रहमत जोश में आ जाती है। फैल जाती है। इसमें बड़े–बड़े गुनहगारों के गुनाह माफ़ हो जाते हैं। इसलिये नियत बिल्कुल दुरूस्त हो। एहसास जगा हुआ हो। ज़हन को थोड़ा सा इसमें हाज़िर कर लीजिए और दिल व दिमाग़ से ये बात कहलवा लीजिए कि ये रोज़ा अल्लाह की ख़ुशी के लिये रख रहे हैं, न किसी रस्म में, न किसी रिवाज में, न किसी मसलिहत में और न किसी और वजह से रख रहे हैं।"

हज़रत मौलाना अबुल हसन अली नदवी रह०
(रमज़ानुल मुबारक और उसके तक़ाज़े)

इफ़ादात-ए-रसूल स०अ०

अरमुग़ान बदायूनी नदवी

➢ रमज़ानुल मुबारक का सबसे पहला अश्रा रहमत, दूसरा अश्रा मग़फ़िरत और तीसरा अश्रा आग से आज़ादी का है।

➢ रमज़ानुल मुबारक के महीने में नेकी का काम करना सवाब के एतबार से ऐसा है जैसा दूसरे महीनों में फ़र्ज़ का अदा करना।

➢ रमज़ानुल मुबारक के अन्दर एक फ़र्ज़ को अदा करना ग़ैर रमज़ान में सत्तर फ़र्ज़ों को अदा करने के बराबर है।

➢ रोज़ा अस्ल में सब्र और ग़मख़्वारी का महीना है, जिसकी बरकत से जन्नत का परवाना मिलता है और रिज़्क़ में वुसअत होती है।

➢ रमज़ानुल मुबारक में किसी रोज़ेदार को इफ़्तार कराना गुनाहों से माफ़ी और जहन्नम से नजात का ज़रिया है।

➢ रमज़ानुल मुबारक में ख़ूब ज़िक्र और इस्तिग़फ़ार करना चाहिये, क्योंकि इससे अल्लाह तआला की रज़ा हासिल होती है, इसी के साथ जन्नत की तलब और जहन्नम से पनाह भी मांगते रहना चाहिये।

➢ रमज़ानुल मुबारक में इस उम्मत को बतौर ख़ास पांच चीज़ें दी गयी हैं– १– रोज़ादार की मुंह की बदबू मुश्क़ से ज़्यादा अल्लाह को पसंद होना। २– दरिया की मछलियों का दुआ करना। ३– जन्नत का हर रोज़ रोज़ेदारों के लिये सजाया जाना। ४– सरकश शैतानों को क़ैद किया जाना ताकि बुराई न फैला सकें। ५– रमज़ान की आख़िरी रात में रोज़ेदारों को मग़फ़िरत का परवाना हासिल होना।

➢ रमज़ानुल मुबारक में अल्लाह की रहतमें नाज़िल होती हैं और ख़तांए माफ़ की जाती हैं और दुआंए कुबूल की जाती हैं।

➢ रमज़ानुल मुबारक में चौबीस घन्टे के अन्दर एक घड़ी ऐसी भी होती है जिसमें मुसलमान रोज़ादार की दुआ अल्लाह तआला कुबूल फ़रमाता है।

➢ रमज़ानुल मुबारक में सहरी करने वालों पर अल्लाह की रहमतों का नुज़ूल होता है।

➢ रोज़ा इन्सान के लिये ढ़ाल है जब तक कि इन्सान सही तौर से रखता रहे।

➢ रमज़ानुल मुबारक का एक रोज़ा बग़ैर किसी वजह के छोड़ना ऐसा है कि उसकी तलाफ़ी ज़िन्दगी भर के रोज़े रख कर भी करना नामुमकिन है।

➢ रमज़ानुल मुबारक में शब–ए–क़द्र को तलाश करना ज़रूरी है क्योंकि अगर इससे महरूम रह गये तो मानो की बहुत बड़ी ख़ैर की चीज़ से महरूमी हो गयी।

➢ शब–ए–क़द्र में इस दुआ को पढ़ना चाहिये,

"اَللّٰھُمَّ اِنَّکَ عَفُوٌّ تُحِبُّ الْعَفْوَ فَاعْفُ عَنِّی"

ऐ अल्लाह तू बिलाशुब्हा माफ़ करने वाला है और माफ़ करने को पसंद फ़रमाता है, तू मुझको भी माफ़ फ़रमा दे।

➢ एतकाफ़ करने वाले की गुनाहों से हिफ़ाज़त रहती है और उसके लिये नेकियां वैसे ही लिखी जाती हैं जैसे नेकी का काम करने वाले के लिये लिखी जाती हैं।

➢ अल्लाह की रज़ा की तलब की ख़ातिर एतकाफ़ करने वाले के लिये अल्लाह तआला उसके और जहन्नम के बीच तीन ख़न्दक़े आड़ फ़रमा देते हैं, जिसकी चौड़ाई आसमान व ज़मीन की चौड़ाई से भी ज़्यादा है।

➢ जन्नत को शुरू साल से आख़िरी साल तक रमज़ान के लिये सजाया जाता है।

➢ रमज़ानुल मुबारक में उम्मते मुहम्मदिया स०अ० के लिये जहन्नम के दरवाज़े बन्द कर दिये जाते हैं और जन्नत के दरवाज़े खोल दिये जाते हैं।

➢ रमज़ान के आख़िरी दिन इतनी ज़्यादा तादाद में अल्लाह तआला लोगों की माफ़ी फ़रमाते हैं जितना की शुरू रमज़ान से हर दिन बन्दों को माफ़ फ़रमाते हैं।

➢ शब–ए–क़द्र में इबादत करने वाले के साथ फ़रिश्ते भी साथ में होते हैं और उसकी दुआओं पर आमीन कहते हैं।

➢ ईद के दिन अल्लाह तआला कहता है देखो मैंने उनको रोज़ों और तरावीह के बदले में अपनी रज़ा अता की।

بسم اللہ الرحمن الرحیم

मासिक

अरफ़ात किरण

रायबरेली

अंक:६-७ जून-जुलाई २०१४ ई० वर्ष:६

संरक्षक
हज़रत मौलाना सैय्यद
मुहम्मद राबे हसनी नदवी
अध्यक्ष - दारे अरफ़ात

निरीक्षक
मौ० वाज़ेह रशीद हसनी नदवी
जनरल सेकेरेट्री- दारे अरफ़ात

सम्पादकीय मण्डल
बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी
मुफ़्ती राशिद हुसैन नदवी
अब्दुस्सुबहान नाखुदा नदवी
महमूद हसन हसनी नदवी
मो० हसन नदवी

सह सम्पादक
मो० नफ़ीस ख़ाँ नदवी

प्रति अंक-10रू वार्षिक-100रू०
सम्मानीय सदस्यता-500रू० वार्षिक

www.abulhasanalinadwi.org
FAX-0535-2211386
E-Mail: markazulimam@gmail.com

इस अंक में:

रमज़ान के बाद.....२
मुहम्मद नफ़ीस ख़ाँ नदवी
चाँद के मसाएल.....३
रमज़ानुल मुबारक आत्मिक शुद्धता का महीना.....५
मौलाना शमसुल हक़ नदवी
सहरी – इफ़्तार ज़रूरी एहकाम.....७
जिन सूरतों में रोज़ा टूट जाता है.....१०
रमज़ानुल मुबारक में औरतों के मसाएल.....१५
तरावीह की नमाज़.....१७
एतिकाफ़ के कुछ मसले.....१९
मुफ़्ती राशिद हुसैन नदवी
सदक़-ए-फ़ित्र.....२१
ईदुल फ़ित्र.....२२
ज़कात एहकाम व मसाएल.....२४
हव्वा की बेटी.....३०

मर्कज़ुल इमाम अबिल हसन अल–नदवी दारे अरफ़ात, तकिया कलां रायबरेली,यू0पी0.229001
मो० हसन नदवी ने एस० ए० आफसेट प्रिन्टर्स, मस्जिद के पीछे, फाटक अब्दुल्ला खॉ, सब्ज़ी मण्डी, स्टेशन रोड रायबरेली से छपवाकर आफिस अरफ़ात किरण,मर्कज़ुल इमाम अबिल हसन अल–नदवी, दारे अरफ़ात, तकिया कलां रायबरेली से प्रकाशित किया।

रमज़ान के बाद

मुहम्मद नफ़ीस ख़ाँ नदवी

रमज़ानुल मुबारक के महीने की मिसाल एक साफ़–सुथरे पानी की नदी की है जिसके अन्दर से गुज़र कर मुसलमान एक पार से दूसरे पार होते हैं और अपनी दीनी ज़िन्दगी के नये साल में दाख़िल होते हैं जिसमें वो अपने पिछले साल की कोताहियों और कमज़ोरियों की गन्दगी से नहा–धोकर साफ़ सुथरे होकर निकलते हैं और अपनी ज़िन्दगी को नये सिरे से साफ़–सुथरे हाल में शुरू करते हैं।

हुज़ूर स0अ0 की हदीस है कि आपने हज़रत जिब्राईल की इस दुआ पर आमीन कही जिसमें उन्होने एक मुसलमान की ये बदक़िस्मती और ख़राबी बतायी कि रमज़ान आया हो और वो अपने गुनाहों से बख़्शिश न हासिल कर सके। इसी बिना पर रमज़ान के बाद का ज़माना एक मुसलमान की दीनी ज़िन्दगी का नया साल है जिसको वो साफ़ सुथरे और नये सिरे से शुरू करता है।

रमज़ान से एक तरफ़ मुसलमान की ज़िन्दगी का निरीक्षण होता है और दूसरी तरफ़ उससे नया हौसला मिलता है और तक़वा व पाकी की मश्क़ भी होती है। महीने के 29–30 दिन इस हालत में गुज़रे हुए होते हैं कि हर रोज़ भूख व प्यास पर सब्र करना पड़ता है और ये सब्र किसी मजबूरी या लाचारी से नहीं कि मायूसी की कैफ़ियत की वजह से सिर्फ़ नाम का सब्र हो बल्कि अपने इरादे और नफ़्स के ज़ब्त के साथ जिसमें सेहत व हौसले का जज़्बा होता है और चूंकि वो परवरदिगार के हुक्म की तामील में और उसकी रज़ा के लिये होता है इसलिये एक तरफ़ उससे हौसला व हिम्मत की तरबियत व मश्क होती है और दूसरी तरफ़ वो इबादत के हुक्म में दाख़िल होकर अल्लाह की रज़ा और आख़िरत की कामयाबी का ज़रिया बनता है।

रमज़ानुल मुबारक की पाकीज़गी और खूबी की ही बात है कि अल्लाह तआला के मर्ज़ी के और दीनी हैसियत से अहमतरीन वाक़्यात इसी माह में पेश आये। बदर की जंग का वाक़्या जिसमें हक़ व बातिल की कशमकश में पांसा इस्लाम के हक़ में पलट गया और फ़तह मक्का का वाक़्या जिसने इस्लामी इतिहास के धारे को ज़बरदस्त और नया रुख़ दिया और उससे भी ज़्यादा ये बात कि अल्लाह तआला का कलाम इसी महीने नाज़िल हुआ और ज़मीन वालों को इससे नेकी व नेअमत अता की गयी।

रमज़ानुल मुबारक की ये और दूसरी बहुत सी खूबियां और अज़मतें हैं जिनकी बिना पर इस महीने को सही तरीक़े से गुज़ारने वाले मुबारकबाद पाने के क़ाबिल हैं जिन्होने इसकी नेमतों से अपने दामन भरे और इसकी बरकतों से मालामाल हुए। उनकी इस कामयाबी का जश्न ईद के दिन के ज़रिये ज़ाहिर होता है जिसको "ईदुल फ़ित्र" कहते हैं। यानि रोज़े से फ़ारिग़ होने की ईद। इस दिन मुसलमान अपनी खुशी का इज़हार साफ़ सुथरे कपड़े पहन करके, और अपने रब के सामने शुक्र का सजदा करके यानि ईद की नमाज़ अदा करके करते हैं और एक दूसरे को मुबारकबाद देते हैं कि उन्होने ये महीना उसके आदाब के साथ और उसकी बरकत हासिल करके गुज़ारा और अब वो रश्क़ के क़ाबिल भी हैं और मसरूर भी।

लेकिन ये महीना अपने पीछे बहुत सी ज़िम्मेदारियां भी छोड़ जाता है। ये ज़िन्दगी के बहुत से मामलों में सलाह और सब्र को अपनाने का सबक़ सिखा जाता है। वो एक नेक मुसलमान की अज़्म व हिम्मत को बढ़ावा देने वाला साबित होता है कि अब वो अपनी ज़िन्दगी को ज़्यादा बेहतर और साफ़ बनायेगा और माहे रमज़ान में उसने जो सब्र दिखाया उसको जारी रखेगा।

रमज़ानुल मुबारक की हैसियत एक तरह के तरबियती कैम्प की है जिसमे न सिर्फ़ एक ख़ास क़िस्म की पाबन्द ज़िन्दगी गुज़ारना पड़ती है बल्कि आगे के लिये और ताक़त और सलाहियत पैदा की जाती है। सलाहियत पैदा की जाती है। (शेष पेज 30 पर)

चाँद के मसाएल

इस्लाम की कई बड़ी–बड़ी इबादतें चांद से जुड़ी हुई हैं। इनमें हज और रमज़ान सबसे ऊपर हैं लेकिन मनासिक–ए–हज (हज की अदायगी का तरीक़ा) की अदायगी हिजाज़–ए–मुक़द्दस में होती है जहां चाहे कैसी भी हो लेकिन इस्लामी हुकूमत मौजूद है, जिसका अपना तरीक़ा और तर्ज़–ए–फ़िक्र है, जिसका नतीजा ये है कि ज़िलहिज्जा और दूसरे महीनों में चाँद का ऐलान सरकारी तौर पर होता है और पूरा देश इसको मानता है या मानने पर मजबूर है। इसका नतीजा ये है कि आपसी फूट की कोई बात सामने नहीं आती।

लेकिन रमज़ान और कई कारणों से उससे भी बढ़कर ईदुलफ़ित्र व ईद–ए–कुर्बां में पूरी दुनिया के हर देश और हर क्षेत्र के मुसलमानों का वास्ता पड़ता है। ये क्षेत्र अलग–अलग भौगोलिक ज़ोन में स्थित हैं, फिर वहां के मुस्लिम नागरिक भी अलग–अलग मसलकों में बटे हैं। इसके नतीजे में हर दो–तीन साल बाद चांद से संबंधित अत्यधिक विरोधाभास सामने आते हैं। कई सालों में तो दो से ज़्यादा ईद भी मनायी गयी हैं। गंभीर लोगों के लिये ये बहुत ही अफ़सोसनाक स्थिति होती है क्योंकि ईद को तो ख़ुशी के इज़हार और पुरानी रंजिशों और नफ़रतों को भुलाकर आपस में मिल जाने का एक ज़रिया व मौक़ा बनना चाहिये था। लेकिन इस पर जितना भी अफ़सोस किया जाये कि कम है कि जाहिलियत और अज्ञानता के कारण ख़ुशी के ये दिन नयी रंजिशों और नफ़रतों का ज़रिया बन जाते हैं। इनमें मुसलमानों का सम्मान, बड़ों की इज़्ज़त व छोटों पर शफ़क़त इत्यादि से संबंधित हिदायतों के परख़्चे उड़ा दिये जाते हैं और हर वर्ग दूसरे वर्ग का मज़ाक़ उड़ाकर दिली ख़ुशी महसूस करता है। ग़ैर भी चाहे ज़बान से कुछ न कहें लेकिन उनकी मुस्कुराहटें बहुत कुछ बयान कर देती हैं। केवल नाम के बुद्धिजीवी भी दीनी लोगों पर फ़ब्तियां कसने में कोई कसर नहीं उठा रखते। पिछले साल बी.बी.सी. पर एक साहब की बात अब भी जैसे कानों में गूंज रही हो कि अब ईद को एक रोज़ की ईद के बजाये हफ़्ते की ईद कहना चाहिये।

मेरे ख़्याल से फूट व बिख़राव का सबसे बड़ा कारण ये है कि हमारे देश में इस्लामी व्यवस्था नहीं है। अगर सऊदी अरब की तरह एक इस्लामी हुकूमत होती तो चाहकर या ना चाहकर सब उसके हुक्म को मानने पर मजबूर होते और ये बात सामने न आती। ग़ैर इस्लामी देश होने के बावजूद भी अगर इस्लामी शासन की व्यवस्थित व्यवस्था होती या कम से कम कोई केन्द्रीय चांद (देखने की) कमेटी होती और राज्यों में इसकी शाख़ें होती और केन्द्रीय कमेटी के ऐलान को अमीर के ऐलान जैसा समझा जाता, तब भी ये अफ़सोसनाक स्थिति सामने न आती। लेकिन अफ़सोस! हम इस काम को भी न कर सके।

अतः स्थिति को मद्देनज़र रखते हुए हमें कोशिश यही करनी चाहिये कि इस प्रकार की कोई व्यवस्था बन जाये और देश के सभी मुसलमान इसको स्वीकार करें। लेकिन जब तक इस प्रकार की व्यवस्था न बन सके उस समय तक कम से कम यही तय कर लें कि हमारा संबंध चाहे किसी भी मकतब–ए–फ़िक्र (मसलक) से हो, बेशक बात हम अपने ही ग्रुप की मानें लेकिन इन इबादतों और खुशी के लम्हों को इस प्रकार की फूट का शिकार न बनाएं कि उनके आने से दिल में ख़ुशी आने के बजाये ख़ौफ़ पैदा हो और रोंगटे खड़े होते हों कि देखें कि इस बार क्या शक्ल सामने आती है। इसलिये कि चांद देखने का मसला एक ख़ालिस फ़िक़्ही मसला है। इसकी हक़ीक़त सही तौर से फ़िक़ के माहिर ही समझ सकते हैं। अतः जिस प्रकार मरीज़ अपने मर्ज़ के बारे में किसी माहिर डाक्टर से सलाह लेता है और उसकी हिदायतों पर अमल करता है लेकिन दूसरे डाक्टरों के पास जाने वालों पर टिप्पणी नहीं करता, उसी प्रकार जिस हल्क़े और जिस चांद कमेटी वालों से संबंध हों, उनकी बात मान कर चले लेकिन बिलावजह दूसरों पर टिप्पणी न करे, न मज़ाक़ उड़ायें, इसलिये कि किसी भी इबादत की

रूह और जान अल्लाह के हुक्म पर अमल करके उसकी रज़ा हासिल करना है। सोचने की बात ये है कि क्या हमारे इस तरीक़े से अल्लाह की रज़ा हासिल होगी?!

शरीअत का हुक्म ये है कि चांद देखकर रोज़ा रखा जाये और चांद देखकर ईद मनायी जाये। अगर चांद नज़र न आये तो तीस की गिनती पूरी की जाये। हज़रत आयशा रज़ि0 फ़रमाती हैं: "आप स0अ0 जितना शाबान के दिनों को गिनने का एहतिमाम करते थे उतना दूसरे किसी महीने का एहतिमाम नहीं फ़रमाते थे, फिर रमज़ान का चांद देखकर रोज़ा रखते थे अगर आसमान में बादल होते तो तीस की गिनती पूरी फ़रमाते थे।" (अबूदाऊद : 2325) फ़ुक़्हा ने फ़रमाया कि सभी लोगों का चांद देखना शर्त नहीं है बल्कि अगर आसमान में चांद देखने की जगह साफ़ हो तो एक भीड़ का चांद देख लेना सभी लोगों का चांद देखना मान लिया जायेगा। अगर बादल या गर्द व गुबार की वजह से आसमान साफ़ न हो तो रमज़ान में एक विश्वसनीय व्यक्ति का और ग़ैर रमज़ान में दो विश्वस्नीय लोगों का चांद देख लेना सभी लोगों का देख लेना समझा जायेगा और संबंधित हुक्म साबित हो जायेगें। (हिदाया: 195–196) फिर रेडियो की ख़बर विश्वस्नीय होगी या नहीं? फ़ोन की सूचना का क्या हुक्म होगा? तार, ख़त, फ़ैक्स, ईमेल और एसएमएस के द्वारा जो सूचना या ख़बर आये उसको कब विश्वस्नीय माना जायेगा और कब विश्वस्नीय नहीं माना जायेगा? ये आर इसी तरह के बहुत से सवाल हैं जिनको उलमा ने हल करने की कोशिश की है। कई में वो एकमत हैं और कई में उनके बीच इख़्तिलाफ़ है, लेकिन इसमें कोई शक नहीं कि ये काम सिर्फ़ फ़िक़ के माहिरों का है।

अत: हम जिस हल्क़े से जुड़े हों जब तक कोई केन्द्रीय कमेटी या हुकूमत न बन जाये हमको चाहिये कि उनकी बात मान कर चलें और डेढ़ ईंट की अलग मस्जिद बनाकर फूट का कारण न बनें कोई शक दिमाग़ में आये तो उसके ज़िम्मेदारों से सम्पर्क कर लें, इस प्रकार हम उस अवसर पर पैदा हो जाने वाली अव्यवस्था को एक हद तक दूर कर सकते हैं।

कई बार चांद देखने के सिलसिले में बड़े इख़्तिलाफ़ हो जाते हैं। ख़ासकर जब आसमान साफ़ न हो। ऐसी सूरत में पूरी हद तक इख़्तिलाफ़ से बचना चाहिये और हर ऐरे ग़ैरे की बात सुनने के बजाये अपने इलाक़े के विश्वस्नीय उलमा किराम से सम्पर्क किया जाये और अगर चांद कमेटी का निज़ाम क़ायम हो तो उसकी बात तस्लीम की जाये। अगर उनके बीच किसी तरह की फूट हो तो जिस मसलक या जिस कमेटी से जुड़ा हो उसके जिम्मेदारों की हिदायत पर अमल किया जाये ताकि किसी प्रकार की कोई फूट न पड़ सके और खुशियों का त्योहार भाईचार उल्फ़त व मुहब्बत का पैग़ाम दे जिसका असर ग़ैरो पर पड़े।

कुछ ज़रूरी मसले

जिस शख़्स ने रमज़ान का चांद देखा लेकिन किसी वजह से उसकी गवाही रद्द कर दी गयी और आम लोगों ने रोज़ा नही रखा तो उस चांद देखने वाले शख़्स पर रोज़ा रखना ज़रूरी है। (हिन्दिया 1/197)

अगर किसी ने ईद का चांद देखा और उसकी गवाही रद्द कर दी गयी तो वो रोज़ा नहीं छोड़ेगा चाहे उसके रोज़े 31 हो जायें। (हिन्दिया 1/197)

किसी शख़्स ने शरई चांद कमेटी या मुस्लिम शासक की तरफ़ से या रेडियो या टेलीविज़न की तरफ़ से शरई ज़ाब्ते के मुताबिक़ चांद का ऐलान किया हो और उसकी सच्चाई को स्वीकार कर लिया जाये तो ऐसे ऐलान का शरई तौर पर एतबार है। (जवाहिरुल फ़िक़ 1/401)

अगर मतला (चांद के दिखने की जगह) साफ़ न हो और दूसरी जगह की कोई चांद कमेटी का ज़िम्मेदार शख़्स टेलीफ़ोन पर इस बात की ख़बर दे कि यहां चांद शहादत के शरई ज़ाब्तों के मुताबिक़ कमेटी ने चांद के सुबूत का ऐलान कर दिया है और उस ऐलान से महीना 29 दिन से कम न हो तो उस ख़बर का एतबार किया जा सकता है। (जवाहिरुल फ़िक़ 1/401)

अगर कोई शख़्स सऊदी अरब से रमज़ान में हिन्दुस्तान आये और यहां उसके तीस रोज़े पूरे हो जाये तो वो उस वक़्त तक रोज़ रखेगा जब तक कि हिन्दुस्तान में ईद का चांद नज़र न आ जाये। चाहे सऊदी अरब से आने वाले शख़्स को 30 से ज़्यादा ही रोज़े क्यों न रखना पड़े। (अहसनुल फ़तावा 4/423)

अगर कोई शख़्स रमज़ान शुरू होने के बाद हिन्दुस्तान से सऊदी अरब चला जाये और वहां उसके 28 रोज़े होने के बाद ईद का चांद नज़र आ जाये तो वो रोज़ा तोड़कर ईद में शरीक हो जायेगा और ईद के बाद एक रोज़े की क़ज़ा करेगा इसलिये कि महीना शरीअत के एतबार से 29 दिन से कम का नहीं होता। एहतियात का तक़ाज़ा यही है। (हिन्दिया 1/199)

मौलाना शमसुल हक़ नदवी

रमज़ानुल मुबारक
आत्मिक शुद्धता का महीना

ये मुबारक महीना बहार का मौसम है। भूख, प्यास, सब्र, बेकार की बातों से बचना एवं अपनी जीवन के बीते हुए दिनों का निरीक्षण, जो बीत चुके हैं उस पर शर्मिन्दगी के आंसू बहाने और तौबा व इस्तिग़फ़ार के आंसू से उसको धोने का यही सुनहरा मौक़ा है। जब अल्लाह के दरबार में रहमत व मग़फ़िरत की झड़ी लगी हुई होती है और जहन्नम से आज़ादी का भी ऐलान होता है। हदीस पाक के अनुसारः

"ऐ ख़ैर के चाहने वाले आगे बढ़, ऐ शर के चाहने वाले पीछे हटो" की सदा गूंज रही है।

ये ज़िक्र व तिलावत का महीना है। अब तक जो भूल चूक हो चुकी हो आगे उससे बचना व उस पर आंसू बहाना यही इस मुबारक महीने की क़द्र करना है। लापरवाही और गुनाह की माफ़ी की अलग–अलग शक्लें हैं। दीन के किसी हुक्म को भी तोड़ना गुनाह है। इन्सान का इन्सान के हक़ को मारना भी गुनाह है। अपने फ़र्ज़ को ज़िम्मेदारी से अदा करने में कोताही करना, ये भी गुनाह है। लेकिन किसी एक व्यक्ति या समूह का कुछ ऐसे काम करना जिससे उम्मत की एकता को नुक़सान पहुंचता हो ये बड़ा गुनाह है। इस वक़्त जबकि इस मुबारक महीने की बरकत से हमारे दिलों को अल्लाह की रज़ा की तलाश व खोज का शौक़ व जज़्बा हासिल है। ख़ुदा के नाम पर भूख, प्यास, ज़िक्र व तिलावत, तरावीह व तहज्जुद ने दिलों को नरम कर दिया है।

हम हर पहलू से अपना जायज़ा लें। अपने दीनी कामों पर भी नज़र डालें और देखें कि इसमें कितना हिस्सा ख़ुदा की रज़ा और दीन की सरबुलन्दी का है और कितना केवल नाम का और दिखावे का है या अपने तुच्छ उद्देश्यों की प्राप्ति का है जो दीन की रंग में केवल दुनिया की प्राप्ति है। इन मुबारक घड़ियों में अपने हालात व आमाल, नियतों व इरादों का हक़ीक़त में जायज़ा लेकर उस रुख़ को तय कर लेना जिसमें अल्लाह की रज़ा, उम्मत के लाभ और जीवन का संदेश निहित है। अक़्लमन्दी यही है और निरीक्षण के बाद वास्तविकता से परिचित होकर इस बात से कि लोग क्या कहेंगे, अगर हम पीछे हटे और अपनी राय बदली तो हमारा अपमान होगा बड़ी नासमझी व नादानी है।

हज़रत उमर रज़ि0 ने अब्दुल्लाह बिन क़ैस को हिदायत देते हुए लिखा थाः "ऐसा मामला जिसका आज तुमने फ़ैसला दे दिया लेकिन दोबारा ग़ौर करने के बाद सही रूप एवं वास्तविकता समझ में आ गयी तो अब कल के ग़लत फ़ैसले पर स्थिर न रहो बल्कि उसको रद्द कर दो कि सत्य सदा के लिये है और सच को अपना लेना झूठ में पड़े रहने से बेहतर है।"

ये आदेश नामा यद्यपि हज़रत उमर रज़ि0 ने अब्दुल्लाह बिन क़ैस को लिखा था लेकिन ये ऐसी बात है जो सत्य के हर समर्थक के लिये मील का पत्थर है और प्रकाश का स्तम्भ है। अगर हम सोच विचार के बाद इस नतीजे पर पहुंचे कि अब तक जो समझा था वो ग़लत था तो फिर ये न सोचना चाहिये कि अगर हम अपनी राय बदल लेंगे तो लोग हम को क्या कहेंगे। ख़ुदा के यहां लोगों के कहने या न कहने का असर नहीं होगा वहां तो मामला सच ही सच पर होगा। झूठ रद्द कर दिया जायेगा और ये वो वक़्त होगा जब माफ़ी का मौक़ा हाथ से निकल चुका होगा। ऐसा बहुत बार होता है कि जब एक व्यक्ति सच्चाई से काम लेता है तो उसकी अन्तरात्मा उसे पुकारती है कि तुम्हारी राय और फ़ैसला ग़लत है और तुम जिसकी राय को ग़लत समझ रहे हो उसकी राय सही है। किन्तु वह व्यक्ति केवल इस कारण से अपनी राय पर अमल नहीं करता कि उसकी स्वाभिमान को ठेस पहुंचेगी। हालांकि उसको मालूम है कि अल्लाह के रसूल स0अ0 ने फ़रमाया है कि जो अल्लाह की रज़ा की ख़ातिर झुकेगा, ख़ुदा उसको उठाएगा, बुलन्द करेगा।

हदीस के शब्द हैंः "जो अल्लाह की ख़ातिर झुका,

अल्लाह तआला उसको बुलन्द कर देगा।"

दीनी व क़ौम के मामलों में विचार व दृष्टिकोण की भिन्नता की भी यही स्थिति है कि अगर हमारा कोई विचार ग़लत साबित हो जाता है और वास्तविकता हमारे सामने आ जाती है तो फिर इख़लास का और अल्लाह की रज़ा का और क़ौम व मिल्लत के लाभों की मांग यही है कि हम बिना देर किये हुए अपने विचारों की ग़लतियों को स्वीकार कर लें और दूसरे के सही विचारों को मान लें कि इस्लाम की यही अस्ल रूह है। जिस तरह ग़लत काम करना क़ौम व मिल्लत के लाभों के विरूद्ध कोई क़दम उठाना, जिससे दीन व मिल्लत को नुक़सान पहुंच रहा हो, जुर्म व गुनाह है। अगर कभी अज्ञानतावश या नादानी में ऐसी ग़लती हो जाये और फिर हक़ीक़त समझ में आये तो तुरन्त उससे बचना चाहिये। ग़लत बात की दलील लोगों को तो धोखा दे सकती है लेकिन वो दिन आकर रहेगा जब झूठ का सारा रंग उतर जाएगा और सच्चाई अपने वास्तविक रूप में सामने आकर रहेगी।

दुनिया का मिटना और क़यामत का आना यक़ीनी है, कब आयेगी इसको अल्लाह तआला ने नहीं बताया ताकि हर इन्सान को उसके कामों का बदला दे और उसका बदला वैसा ही होगा जैसा उसका काम होगा। इसलिये अल्लाह तआला ने इस हक़ीक़त को खोल कर बयान कर दिया: फ़रमाया :

"क़यामत यक़ीनन आने वाली है। मैं चाहता हूं कि उस (के वक़्त) को छिपाए रखूं ताकि हर शख़्स जो कोशिश करे उसका बदला पाये।" (सूरह ताहा : 15)

रमज़ानुल मुबारक में अगर भूख प्यास, सब्र व ज़ब्त और इच्छा के विपरीत कार्य करना इसलिये है कि कहीं हमारा रोज़ा न ख़राब हो जाये, तो ये उसका अभ्यास है कि मुसलमान सच्चाई पर डटे रहने और सच्चाई की ख़ातिर हर नागवारी सहने बल्कि कभी कभी ज़िल्लत तक उठाना गवारा करें, लेकिन सच्चाई का दामन हाथ से न छूटने पाये।

इस सिलसिले में आप स0अ0 के मक्के का जीवन विशेषतय: हमारे लिये श्रेष्ठ उदाहरण है कि आप स0अ0 ने सब कुछ झेल लिया लेकिन सच की जो आवाज़ लगायी थी उससे पीछे नहीं हटे। मक्की जीवन का सबसे नाज़ुक और कठिन दौर वो समय था जब कुरैश के काफ़िरों ने आप के चचा अबूतालिब से आख़िरी शिकायत की कि आप अपने भतीजे को रोकिये वरना फिर हम उनसे और आपसे समझ लेंगें और अबूतालिब ने फ़रमाया: "भतीजे ज़रा अपनी जान का भी ख़्याल रखो और मेरी जान का भी, मुझ पर इतना बोझ न डालो कि जिसको उठा न सकूं।"

चचा की बातें सुनकर आप स0अ0 की आंखे नम हो गयीं कि बचा सहारा भी टूट गया। लेकिन आप के इरादों में ज़रा सी भी कमज़ोरी नहीं आयी बल्कि बहुत खुलकर कहा:

"चचाजान! अगर वो मेरे दाहिने हाथ पर सूरज और बायें हाथ में चांद रख दें और ये चाहें कि मैं इस काम को छोड़ दूं यहां तक कि अल्लाह तआला इसको ग़ालिब करे या मैं इस रास्ते में हलाक हो जाऊं तब भी मैं बाज़ न आऊंगा।"

मिस्र के प्रसिद्ध लेखक महमूदुल इक़ाद ने मक्के के जीवन का नक़्शा खींचते हुए मक्की जीवन को इस्लाम की महत्वपूर्ण विशेशता के रूप में बयान किया है।

नबी करीम स0अ0 का मक्की जीवन ये पाठ पढ़ाता है कि बढ़ते हुए क़दम को पीछे न हटाना चाहे वो आगे न बढ़ सकें, सच पर जमे रहना चाहे नफ़्स उससे हटाने की कितनी ही कोशिश करे, ग़लत को ग़लत ही कहना चाहे उसको साम्राज्य व वर्चस्व ही क्यों न मिल रहा हो, बुराई के सामने डअे रहना चाहे वो कितनी हावी हो जाये और वो लोगों के बीच प्रचलित हो, लोगों को भलाई की दावत देते रहना चाहे इसके बदले में तकलीफ़ व कष्ट का सामना ही क्यों न करना पड़े, फ़र्ज़ को फ़र्ज़ समझ कर अदा करते रहना चाहे इसका नतीजा सामने न आये, ज़िम्मेदारी को ज़िम्मेदारी समझकर अंजाम देते रहना चाहे उसका कोई बड़ा फ़ायदा न दिखाई दे, मर्द–ए–मोमिन का अपनी मर्दान्गी पर क़ायम रहना ही उसकी विशेष विशेषता और उसकी जवानी का तम्ग़ा है चाहे उसके आस–पास की हर हर चीज़ उसको पीस डालना चाहती हो।

अगर हम सच में मुसलमान हैं और इस्लाम की हक़ीक़त न केवल ये कि हमारे दिलो में उतर गयी है बल्कि रग–रग में रच–बस गयी है तो हमारा भी यही किरदार व चरित्र होना चाहिये कि हालात कितने ही विपरीत क्यों न हों हम अपनी इस्लाम व मोमिनों वाले चरित्र पर क़ायम रहेंगे।

(शेष पेज 9 पर)

सहरी - इफ़्तार
ज़रूरी एहकाम

सहरी व नियत

रोज़े चाहे रमज़ान का हो चाहे किसी और चीज़ का। बहरहाल उनके लिये सहरी खाना सुन्नत है। रोज़े की शुरूआत सुबह–ए–सादिक़ के उदय होने से होती है और ये सूरज डूबने पर ख़त्म होता है। इसलिये शरीअत ने ये सहूलत रखी है कि रोज़ेदार सुबह होने से पहले सहरी खा ले ताकि रोज़े में ताक़त बहाल रहे। अलग–अलग हदीसों में आप स0अ0 ने इसका शौक़ दिलाया है। इसीलिये सहरी में सवाब होने पर उम्मत एकमत है। सहरी उतनी देर तक खायी जा सकती है कि सुबह होने का शक न हो, रात के बचे होने का भी शक न हो। हज़रत ज़ैद बिन साबित रज़ि0 से रिवायत है कि हम लोग जब रसूलुल्लाह स0अ0 के साथ सहरी करते थे तो सहरी और फ़ज्र की अज़ान के बीच पचास आयत की तिलावत के बराबर फ़ासला होता था। आम तौर इतना कुरआन पांच–छः मिनट में पढ़ा जाता है।

अगर इस ख़्याल से सहरी खाई कि अभी सुबह नहीं हुई है हालांकि सुबह हो चुकी थी तो रोज़े की क़ज़ा वाजिब होगी, कफ़्फ़ारा वाजिब नहीं होगा, अगर शक हो कि शायद फ़ज्र का वक़्त हो गया तो बेहतर है कि खाना–पीना छोड़ दे, फिर भी अगर खा ले और सुबह होने का यक़ीन न हो तो उसका रोज़ा हो जायेगा।

इसीलिये आप स0अ0 का इरशाद है:

"सहरी खाओ सहरी में बरकत है।" (बुख़ारी 1923)

एक दूसरी हदीस में आप स0अ0 ने फ़रमाया:

"हमारे और अहले किताब (यहूदी, इसाई इत्यादि) के रोज़ों में फ़र्क़ और श्रेष्ठता सहरी खाने की है (हम खाते हैं और वो नहीं खाते हैं)।" (मुस्लिम 2550)

रही नियत तो इसके बग़ैर रोज़ा नहीं होगा। इसीलिये अगर एक शख़्स सुबह से शाम तक उन सभी चीज़ों से परहेज़ करे जिनसे रोज़ादार परहेज़ करता है लेकिन उसकी नियत रोज़ा रखने की न हो तो उसका रोज़ा नहीं होगा। इसीलिये आप स0अ0 का इरशाद है:

"जो फ़ज्र से पहले ही नियत न करे उसका रोज़ा नहीं होगा।" (तिरमिज़ी 730)

कई दूसरी हदीसों को देखते हुए फ़ुक़्हा ने फ़रमाया कि ज़वाल से एक घन्टा पहले नियत कर ले बशर्ते कि कुछ खाया–पिया न हो तो रमज़ान का और नफ़िली रोज़ा रखना दुरूस्त होगा और नियत का महल क्योंकि दिल होता है इसलिये सिर्फ़ दिल में ये इरादा कर लेना काफ़ी है कि कौन सा रोज़ा रख रहा हूं ज़बान से कहना ज़रूरी नहीं अल्बत्ता बेहतर यही है कि ज़बान से भी कह दे। (हिन्दिया 1/195)

सहरी के मसले

1. रमज़ान के हर रोज़े के लिये अलग–अलग नियत करना ज़रूरी है। (हिन्दिया 1/195)

2. आधा दिन से पहले तक भी अगर रमज़ान के अदा रोज़ों की नियत कर ली तो रोज़ा सही हो जायेगा। (हिन्दिया 1/195)

3. अगर किसी शख़्स ने पूरा दिन खाया–पिया नहीं और पूरा दिन भूखा–प्यासा रहा लेकिन दिल में रोज़े का इरादा नहीं था तो रोज़ा नहीं हुआ। (हिन्दिया 1/195)

4. रमज़ान के रोज़ों की क़ज़ा, बिला तय नज़र का रोज़ा और कफ़्फ़ारे के रोज़ों ने इसी तरह नफ़िल रोज़ों की क़ज़ा जिसे शुरू करने के बाद तोड़ दिया हो इन तमाम रोज़ों में सुबह सादिक़ से पहले नियत करना ज़रूरी है। अगर सुबह सादिक़ के बाद नियत की तो रोज़ा काफ़ी न होगा। (हिन्दिया 1/196)

5. सहरी खाना सुन्नत है लेनिक अगर कोई शख़्स सहरी खाये बग़ैर ही रोज़े की नियत कर ले तो उसका रोज़ा ठीक होगा। अल्बत्ता सहरी की बरकत और सहरी के सवाब से महरूम रहेगा। (शामी 3/400)

इफ़्तार: आदाब व एहकाम

सूरज डूबने के साथ ही इफ़्तार करना सुन्नत है।

हज़रत आयशा रज़ि0 से एक साहब ने पूछा कि सहाबी–ए–रसूल हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ि0 इफ़्तार में जल्दी करते हैं, वक़्त शुरू होने के बाद नमाज़ भी जल्दी पढ़ते हैं और हज़रत अबू मूसा अशरी रज़ि0 नमाज़ में भी देर करते हैं और इफ़्तार में भी, तो आप रज़ि0 ने फ़रमाया कि हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ि0 का तरीक़ा हुज़ूर के तरीक़े पर है। सहरी में देर और इफ़्तार में जल्दी इसलिये बेहतर है कि इस में अल्लाह के सामने अपनी बन्दगी और क्षमता व तवानाई का इज़हार रहे कि हम एक पल भी अल्लाह की दी हुई नेमत से अलग नहीं हो सकते। ये जो कुछ भूख व प्यास बर्दाश्त की गयी है वो केवल ख़ुदा के हुक्म को पूरा करना है और जैसे ही अल्लाह तआला की तरफ़ से इजाज़त का परवाना मिला एक लम्हा भी रुकने की ताब नहीं।

फिर भी इफ़्तार के वक़्त सूरज डूबने का यक़ीन हो जाना ज़रूरी है, अगर शक हो तो इफ़्तार करना जायज़ नहीं, अगर इस यक़ीन के साथ इफ़्तार कर लिया कि सूरज डूब चुका है, मगर बाद में मालूम हुआ कि उसकी ग़लतफ़हमी थी तो सिर्फ़ उसकी क़ज़ा वाजिब होगी और अगर गुमान था कि सूरज नहीं डूबा है फिर भी इफ़्तार कर लिया तो कफ़्फ़ारा भी वाजिब होगा।

इफ़्तार की सुन्नत व मुस्तहब

बेहतर है कि कुछ खजूर से इफ़्तार करे। खजूर न हो तो पानी से। हज़रत अनस रज़ि0 से रिवायत है कि आप स0अ0 ने फ़रमाया, "जिसके पास खजूर हो उसे खजूर से इफ़्तार करना चाहिये, खजूर न हो तो पानी से इफ़्तार करे कि पानी पाक है।" (तिरमिज़ी 694) एक और रिवायत इमाम तिरमिज़ी ने ज़िक्र की है कि "सर्दी में खजूर से और गर्मी में पानी से इफ़्तार करने का नियम मुबारक था।" (तिरमिज़ी 696)

फिर भी उन्हीं से इफ़्तार ज़रूरी नहीं, हस्ब मौक़ा किसी और चीज़ से भी इफ़्तार कर सकते हैं, इसलिये हज़रत अब्दुल्लाह बिन औफ़ी रज़ि0 से रिवायत है कि हम हुज़ूर स0अ0 के साथ एक सफ़र में थे, आप स0अ0 रोज़े से थे, जब सूरज डूबा तो आप स0अ0 ने पानी में सत्तू घोलने का हुक्म दिया ताकि इफ़्तार कर सकें।

इफ़्तार करते वक़्त ये दुआ पढ़ें:

(प्यास ख़त्म हुई, रगें तर हो गयीं और इन्शाअल्लाह अज्र भी साबित है)

कई रिवायतों में ये दुआ भी मनकूल है:

(ईलाही! मैने आप ही के लिये रोज़ा रखा, आप ही के रिज़्क़ से इफ़्तार किया)

इसलिये बेहतर है कि इस दुआ को पहले पढ़ ले और जो दुआ पहले ज़िक्र की गयी है उसको इफ़्तार के बाद पढ़ ले। ये मसनून दुआ तो पढ़नी ही चाहिये लेकिन इसके अलावा भी जो दुआ मुनासिब जाने इफ़्तार के वक़्त कर ले कि ये कुबूलियत का वक़्त है।

हज़रत अब्दुल्लाह बिन अम्र रज़ि0 से रिवायत है कि रोज़ेदार को इफ़्तार के वक़्त एक ऐसी दुआ का हक़ दिया जाता है जो रद्द नहीं की जाती।

हज़रत अम्र बिन अल आस रज़ि0 से रिवायत है फ़रमाते हैं, नबी करीम स0अ0 ने इरशाद फ़रमाया: "हमारे और यहूद और नसारा के रोज़े में फ़र्क़ (हमारा) सहरी खाना है।" (मुस्लिम)

हज़रत अनस से रिवायत है फ़रमाते हैं, नबी करीम स0अ0 मग़रिब की नमाज़ पढ़ने से पहले कुछ ताज़े खजूर से इफ़्तार करते थे, अगर ताज़े खजूर न हों तो कुछ दूसरी खजूर से इफ़्तार करते थे, और अगर खजूरें न हों तो कुछ घूंट पानी पी लिया करते थे। (तिरमिज़ी)

हज़रत ज़ैद बिन ख़ालिद रज़ि0 फ़रमाते हैं, "जो किसी रोज़ेदार को इफ़्तार कराये, या किसी मुजाहिद को असलहा उपलब्ध कराये, तो उसे उसी के बराबर अज्र व सवाब मिलता है।" (बेहक़ी व शुएबुलईमान व शरहुस्सना)

इफ़्तार की दुआ: हज़रत उमर रज़ि0 से रिवायत है फ़रमाते हैं, "आंहज़रत स0अ0 जब इफ़्तार करते थे तो ये फ़रमाते थे: (प्यास जाती रही, रगें तर हो गयीं और सवाब दर्ज हो गया) (अबूदाऊद)

हज़रत मआज़ बिन ज़हीरा से रिवायत है, नबी करीम स0अ0 जब इफ़्तार करते तो फ़रमाते: (या अल्लाह मैंने आपके लिये रोज़ा रखा, और आपही के रिज़्क़ से इफ़्तार किया) (अबूदाऊद मुरसला)

मिली–जुली इफ़्तार पार्टियों में शिरकत

ग़ैर मुस्लिमों की दावत कुबूल करना और उनको दावत देना, साथ मिलकर खाना–पीना जायज़ हैं, लेकिन लगातार साथ खाने की आदत डालने की आदत को फ़ुक़्हा ने मना किया है। (हिन्दिया 5/347)

इफ़्तार की दावत एक तरह की दावत है इसलिये

शरीअत में इसकी गुंजाइश है लेकिन बेहतर यही है कि इस तरह की इफ़्तार पार्टियों से दूर रहे। इसलिये कि ज़्यादातर राजनीतिक लोग ये दावत करते हैं और दावत में रोज़ादारों से ज़्यादा रोज़ा खोरो की सख्या रहती है। कई बार वो वक़्त होने से पहले ही इफ़्तार करने लगते हैं और मग़रिब की नमाज़ भी ख़तरे में पड़ जाती है। बहरहाल इस तरह की सूरतेहाल में न हो तो शिरकत की जा सकती है।

इसी तरह ग़ैर मुस्लिम भाइयों को इफ़्तार की दावत देने में कोई हर्ज नहीं है क्योंकि आप स0अ0 ने ग़ैर मुस्लिमों को दावत दी है। (मुस्लिम 5364) और ख़ुद भी आपने उनकी दावत कुबूल फ़रमायी है। (बुख़ारी 1481) इसलिये ग़ैर मुस्लिमों को दावत देना और उनको अपना मेहमान बनाना जायज़ है।

ग़ैर मुस्लिम जब तक मुसलमान न हो जाये शरीअत के आदेशों को पूरा करने का बाध्य नहीं। व्यापार व हलाल व हराम के जो आदेश हैं ईमान लाने के बाद इन्सान उसका बाध्य होता है जब तक कि ईमान न ले आये ये आदेश उस पर लागू नहीं होते। इसलिये ग़ैर मुस्लिम की दावत के बारे में पैसे की छानबनी ज़रूरी नहीं, अलबत्ता कोई ऐसी चीज़ नहीं खाई जा सकती जो ख़ुद अपनी ज़ात में हराम हो। जिसकी हुरमत केवल पैसे कमाने के कारण हो। जैसे मुरदार या ग़ैर मुस्लिम का ज़बीहा। अलबत्ता अगर ग़ैर मुस्लिम ओहदेदारों को महज़ ख़ुशनूदी व चापलूसी के लिये दावत दी जाये और ज़ाति लाभ मद्देनज़र हो तो उस पर शायद कोई अज्र व सवाब न हो और अगर उनको दावत देने का मक़सद इस्लाम और मुसलमानों से परिचित कराना हो, दीने हक़ की ओर खीचना और मुसलमानों के प्रति ग़लतफ़हमियों को दूर करना हो तो उनकी दावत करना अज्र व सवाब का कारण है। लेकिन अगर किसी मुसलमान के बारे में ये मालूम हो जाये कि उसकी आमदनी हराम या शक–शुब्हा है तो उसकी दावत कुबूल करने से परहेज़ करना चाहिये। बाद में उसे दावत न कुबूल करने की वजह समझा देना चाहिये ताकि उसे इबरत हो। इसी तरह अगर किसी की अक्सर कमाई हराम या नाजाइज़ हो लेकिन जिस पैसे से वो दावत कर रहा है वो पैसा हलाल तो उस दावत में ऐसे लोग शरीक हो सकते हैं जो मुक़्तदा का दर्जा न रखते हों। उलमा और ख़्वास को ऐसी दावतों से बचना चाहिये इसलिये कि फ़िक़ की किताबों में स्पष्टता के साथ ये व्याख्या मौजूद है। (हिन्दिया 5/343)

बैंक वालों की दावत कुबूल करना: बैंक वालों की दावत कुबूल करना ठीक नहीं है कि इसलिये कि बैंक की आमदनी पूरी तरह सूद पर आधारित है और ब्याज का हराम होना खुला हुआ है। दूसरे इससे एक ऐसी संस्था का सहयोग होता है जो ब्याज की ओर ले जाने वाला है और गुनाह में सहयोग हराम है। (किताबुल फ़तावा 3/431)

रोज़ा कुशाई: रोज़ा कुशाई के लिये कोई आयोजन करना हदीस से साबित नहीं और न ऐसी चीज़ों में फिजूल ख़र्ची जायज है। अलबत्ता अगर किसी बच्चे ने पहली बार रोज़ा रखा हो तो उसकी हौसला अफ़जाई के लिये और उसके इस अमल पर ख़ुशी के इज़हार के लिये दोस्त व अअबाब को इफ़्तार पर बुलाया जाये तो इसकी गुंजाइश है इसलिये कि लोग आमतौर पर इसे दीनी काम समझ कर नहीं करते बल्कि इसक मक़सद सिर्फ़ ख़ुशी का इज़हार है। अल्बत्ता ये ज़रूरी है कि फ़िजूल ख़र्ची से बचते हुए और प्रोग्राम की शक्ल दिये बग़ैर दावत का एहतिमाम किया जाये। (किताबुल फ़तावा 3/423)

शेष: रमज़ानुल मुबारक–आत्मिक शुद्धता ....

अगर हम अपनी अनभिज्ञता, अज्ञानता या ग़लत माहौल से प्रभावित होकर कोई ग़लत काम कर चुके हों तो हक़ीक़त के सामने आने के बाद फ़ौरन उससे रुजूअ कर लें और सच्चाई की तरफ़ लौट आयें।

आम जीवन में, घर और ख़ानदान में, मदरसा और ख़ानकाह में, जहां किसी का भी कोई हक़ मारा हो फ़ौरन इस्लामी शिक्षा के प्रकाश में अपनी तस्वीर देखकर उसको ठीक कर लें। अगर हम किसी मिल या फैक्ट्री या कारख़ाने के मालिक हैं, कुछ मज़दूर और वर्कर हमारे अधीन हैं तो उनके भी अधिकारों का ख़्याल रखें। हम जहां रहते हैं वहां और लोग भी रहते हैं, उनमे मुसलमान भी हैं और ग़ैर मुस्लिम भी, उनके साथ हमारा सुलूक व बर्ताव वही होना चाहिये जो अल्लाह के रसूल स0अ0 ने बताया बल्कि बरत कर दिखाया है। हम दुनिया की दूसरी क़ौमों के लिये नमूना और रोशनी थे। हमारे अख़लाक़ व मामलों से प्रभावित होकर दूसरी क़ौमें इस्लाम लाती थीं। मगर अब इस हाल में पहुंच गयी हैं कि मीर दर्द का ये शेर बड़े दर्द के साथ पढ़ना पड़ता है:

हर चन्द आइना हूं पर इतना हूं नाकुबूल।
मुंह फेर ले वो जिसके मुझे रूबरू करें।।

जिन सूरतों में रोज़ा टूट जाता है

रोज़े को तोड़ने वाली चीज़ें दो तरह की हैं। कई वो हैं जिनसे क़ज़ा और कफ़्फ़ारा दोनों लाज़िम होते हैं, और वो चीज़ें ये हैं:

❍पति–पत्नी का संबंध स्थापित करना, चाहे स्खलित (वीर्य निकलना) हो या न हो दोनों हालतों में रोज़ा टूट जायेगा और कफ़्फ़ारा ज़रूरी होगा। अगर ये काम औरत की रज़ामन्दी से हुआ तो उस पर भी कफ़्फ़ारा लाज़िम होगा और अगर उसकी रज़ामन्दी नहीं थी, पति ने ये काम ज़बरदस्ती से किया तो औरत पर केवल क़ज़ा ज़रूरी होगी, अगर शुरूआत में इसे मजबूर किय गया हो और बाद में उसकी रज़ामन्दी हो गयी हो तब भी उस पर केवल कज़ा ज़रूरी होगी।

❍जानबूझ कर ऐसी चीज़ खाना जिसको खाने के तौर पर और दवा इस्तेमाल किया जाता है, जैसे रोटी, चावल, शरबत वग़ैरह या किसी दवा का इस्तेमाल करना।

इन चीज़ों से कफ़्फ़ारा वाजिब होने का ज़िक्र इशारे के साथ या खुले तौर पर हज़रत अबूहुरैरा रज़ि0 की इस हदीस में आया है, फ़रमाते हैं कि हम सब आप स0अ0 के पास बैठे हुए थे कि एक बद्दू ख़िदमत में हाज़िर हुआ और कहने लगा कि ऐ अल्लाह के रसूलस! मैं तबाह हो गया। आप स0अ0 ने पूछा, क्या हुआ?उसने कहा कि मैंने रोज़े की हालत में पत्नी से संबंध स्थापित कर लिया, आप स0अ0 ने पूछा, क्या आज़ाद करने के लिये तुम्हारे पास गुलाम है?उसने कहा, नहीं; आप स0अ0 ने फ़रमाया, तो क्या दो महीने लगातार रोज़ा रखते हो?उसने कहा, नहीं; आप स0अ0 ने फ़रमाया इतना माल है कि साठ ग़रीबों को खिला सकते हो? उसने कहा, नहीं। (बुख़ारी 1936–मुस्लिम 2595)

इससे पता चला कि संबंध स्थापित कर लेने से क़ज़ा व कफ़्फ़ारा दोनों ज़रूरी होंगे और इशारा ये भी मालूम हुआ कि चूंकि खाना–पीना भी इसी दर्जे में है लिहाज़ा इसका भी यही हुक्म होगा। साथ ही कफ़्फ़ारे का तरीक़ा भी मालूम हुई कि पहले नम्बर पर गुलाम आज़ाद करना है, न कर सके जैसा कि वर्तमान समय में गुलामी का दौर ख़त्म हो जाने के कारण किसी के लिये भी ये शक्ल सम्भव नहीं, तो दो महीने लगातार रोज़े रखे, अगर इन दो महीनों के बीच रमज़ान आ गया तो या अय्याम तश्रीक़ आ गये तो क्रम टूट जायेगा और शुरूआत से रोज़े रखने पड़ेंगे। यही हुक्म उस वक़्त भी होगा जब बीमार हो जाये या औरत निफ़ास (प्रस्व रक्त) की हालत में हो जाये, क्रम उससे भी टूट जायेगा। यद्यपि अगर बीच में औरत को हैज़ (माहवारी) आ जाये तो वो रोज़े रखना बन्द कर दे, फिर जब हैज़ रुक जाये तो जितने रोज़े बाक़ी रह गये थे सिर्फ़ वही रख ले फिर से रखने की ज़रूरत नहीं है।

रोज़ा तोड़ने वाली वो चीज़ें जिनसे क़ज़ा ज़रुरी होती है

जिन चीज़ों से रोज़ा टूट जाता है और उससे सिर्फ़ क़ज़ा ज़रूरी होती है, वो चीज़ें निम्नलिखित हैं:

❍अगर किसी को खाने पर जान व माल की धमकी देकर मजबूर किया गया, और उसने ख़ौफ़ से खा लिया तो रोज़ा टूट जायेगा लेकिन सिर्फ़ क़ज़ा ज़रूरी होगी। यही हुक्म उस समय होगा जब ग़लती से कुछ खा–पी ले, यानि रोज़ा याद, खाने–पीने का इरादा नहीं था लेकिन खाने–पीने की चीज़ हलक़ से उतर गयी, तो ऐसी सूरत में रोज़ा टूट जायेगा और सिर्फ़ क़ज़ा वाजिब होगी।

❍अगर कोई ऐसी चीज़ खाई या पी जिसको बतौर दवा या ग़िज़ा नहीं खाया–पिया जाता है जैसे कन्करी वग़ैरह।

❍दांतों में कोई चीज़ अटकी हुई थी, अगर वो चने के बराबर या उससे बड़ी थी तो उसके निगलने से रोज़ा टूट जायेगा और क़ज़ा होगी और अगर चने से छोटी थी तो रोज़ा नहीं टूटेगा लेकिन ये उस वक़्त होगा जब मुंह से न

निकाला हो अगर निकाल कर खाये तो चीज़ छोटी हो या बड़ी रोज़ा टूट जायेगा।

❍अगर हक़्ना लगाया, या नाक के अन्दरूनी हिस्से में दवा डाली, या कान में तेल या कोई दवा डाली या औरत ने अपनी शर्मगाह में दवा डाली तो रोज़ा टूट जायेगा और केवल क़ज़ा ज़रूरी होगी, लेकिन अगर आंख में दवा डाली या सुरमा लगाया तो रोज़ा नहीं टूटेगा, इसी तरह अगर कान में पानी डाला तब भी रोज़ा नहीं टूटेगा।

❍क़ै (उल्टी) के बारे में लोगों में आम तौर से ये ग़लत फ़हमी पायी जाती है कि चाहे जिस तरह की भी क़ै हो रोज़ा टूट जायेगा, इसलिये क़ै के सिलसिले में आप स0अ0 ने इरशाद फ़रमाया:

जिसको रोज़े की हालत में ख़ुद से क़ै हो जाये उस पर क़ज़ा नहीं है और जो जानबूझ कर क़ै करे उस क़ज़ा ज़रूरी है। (तिरमिज़ी)

इस हदीस के आधार पर फ़ुक़्हा (धार्मिक विद्वानों) ने फ़रमाया: क़ै कि कई सूरतें हो सकती हैं लेकिन रोज़ा केवल दो सूरतों में टूटता है, एक ये कि मुंह भर के हो और रोज़ेदार इसको निगल ले, चाहे पूरी क़ै या चने के बराबर या उससे ज़्यादा को निगले। दूसरे ये कि जानबूझ कर क़ै करे और मुंह भर के क़ै हो, बक़िया किसी और क़ै से रोज़ा नहीं टूटता है।

❍अगर अगरबत्ती या लोबान सुलगाई फिर उसको सूंघा और धुआं अन्दर चला गया तो रोज़ा टूट जायेगा। इसी तरह सिगरेट, बीड़ी इत्यादि से रोज़ा टूट जायेगा।

❍अगर बीवी से चुम्बन की वजह से स्खलित हो गया तो रोज़ा टूट जायेगा।

जिन चीज़ों से रोज़ा नहीं टूटता

भूल कर खाने–पीने, सर में तेल लगाने और नहाने–धोने से रोज़ा नहीं टूटता है। अगर दिन में सो जाये और एहतलाम (वीर्य स्खलित होना) हो जाये तो रोज़ा नहीं टूटता है। इसी तरह दिन में इन्जेक्शन लगवाने से रोज़ा नहीं टूटता है लेकिन बेहतर यही है कि अगर बहुत सख़्त ज़रूरत न हो तो इफ़्तार के बाद इन्जेक्शन लगवाये। मिस्वाक चाहे ताज़ी या हरी हो या ख़ुश्क और सूखी हो उससे रोज़ा नहीं टूटता है यद्यपि मन्जन इत्यादि करना मकरूह है और अगर मन्जन हलक़ के नीचे उतर जाये तो रोज़ा टूट जायेगा। अगर ज़बान से कोई चीज़ चखकर थूक दे तो रोज़ा नहीं टूटता, यद्यपि अनावश्यक ऐसा करना मकरूह है।

आंसू या चेहरे का पसीना एक दो बूंद अनजाने में हलक़ में चला जाये तो रोज़ा नहीं टूटेगा। (हिन्दिया 1/203)

नाक को इतनी ज़ोर से सुड़क लिया कि हलक़ में चली गयी तो रोज़ा नहीं टूटेगा इसी तरह मुंह की राल निगल जाने से भी रोज़ा नहीं टूटता। (हिन्दिया 1/203)

थोड़ी सी क़ै आयी फिर ख़ुद ही हलक़ में लौट गयी तो रोज़ा नहीं टूटेगा अलबत्ता जानबूझ कर लौटाने से रोज़ा टूट जायेगा। (हिन्दिया 1/204)

जिस शख़्स ने सहरी में इतना खा लिया हो कि सूरज निकलने के बाद तक डकारे आती हैं और उसके साथ पानी भी आता हो तो उससे रोज़े में कोई फ़र्क़ नही पड़ता। (हिन्दिया 1/203)

रोज़े की हालत में ख़ून निकलवा कर टेस्ट करवाने से रोज़ा नहीं टूटता। (हिन्दिया 1/199)

रोज़े की हालत में मज़ी (वीर्य के पहले मूत्र के मार्ग से निकलने वाली एक–दो बूंद) निकलने से रोज़ा नहीं टूटेगा।

रोज़े की हालत में अपनी बीवी से दिल्लगी करना ऐसे शख़्स के लिये जायज़ है जिसे स्खलित होने या हमबिस्तरी का ख़तरा न हो। (हिन्दिया 1/200)

अगर शौहर ने बीवी पर शहवत से नज़र की या उसका ख़्याल दिल में जमाया जिससे स्खलन हो गया तो रोज़ा नहीं टूटेगा। (दुर्रे मुख़्तार 3/367)

रमज़ान के महीने में अगर किसी का रोज़ा किसी वजह से टूट जाये तब भी उस पर वाजिब है कि रमज़ान के एहतिराम में दिन में रोज़ेदार की तरह खाने–पीने से बचे।

रोज़ा कब मकरुह होता है

कुछ बातें वो हैं जिससे रोज़ा टूटता नहीं, लेकिन रोज़े की हालत में उनका करना मना है। इस तरह की कुछ ज़रूरी चीज़ों का ज़िक्र किया जाता है।

❍बहुत ज़्यादा कुल्ली करना और नाक में पानी

डालना।

❍मुंह में थूक जमा करके निगलना।

❍सहरी में इतनी देर करना की रात का बाक़ी रहने में शक हो जाये।

❍अनावश्यक किसी चीज़ का चखना या चबाना।

❍रोज़े की हालत में बीवी के लब चूसना।

❍बीवी से दिल्लगी करना जबकि सम्भोग या स्खलन का भय हो।

❍औरत का होटों पर सुर्खी लगाना जबकि पेट में चले जाने का अन्देशा हो।

❍शौहर की इजाज़त के बग़ैर बीवी का नफ़िली रोज़ा रखना।

❍पूरे दिन नजिस रहना और ग़ुस्ल न करना।

❍रोज़े की हालत में टूथपेस्ट, कोयला, मन्जन वग़ैरह करना।

❍कोई भी गुनाह का काम करना जैसे क़व्वाली व फ़िल्म देखना इत्यादि।

❍ग़ीबत करना, लड़ना–झगड़ना, गाली देना।

❍कब रोज़ा रखना हराम है

❍ईदैन यानि ईदुल फ़ित्र व ईदुल अज़्हा के दिन।

❍अय्याम तश्रीक़ (11, 12, 13 ज़िलहिज्जह)

आप स0अ0 ने ईदुलफ़ित्र व ईदुलअज़्हा के दिन रोज़ा रखने से मना फ़रमाया है। (बुख़ारी 1995)

अय्याम तश्रीक़ के बारे में आप स0अ0 ने फ़रमाया कि ये खाने–पीने के दिन हैं। (मुस्लिम 2677)

वो वजहें जिनकी वजह से रोज़ा तोड़ देना जायज़ है

❍अचानक ऐसा बीमार पड़ जाये कि अगर रोज़ा न तोड़े तो जान खतरे में हो जाये या बीमारी बढ़ जाये तो रोज़ा तोड़ देना बेहतर है।

❍गर्भवती औरत को कोई ऐसी बात पेश आ गयी जिससे अपनी जान या बच्चे की जान का ख़तरा है तो रोज़ा तोड़ देना बेहतर है।

❍किसी काम की वजह से बेहद प्यास लग और इतना बेताब हो गया कि अब जान का ख़ौफ़ है तो रोज़ा तोड़ देना बेहतर है लेकिन अगर जानबूझ कर उसने इतना काम किया जिसकी वजह से ऐसी हालत हो गयी तो गुनहगार होगा।

❍अगर दूध पिलाने वाली औरत को अन्देशा हो कि रोज़ा रखने की वजह से नवजात शिशु हलाक हो जायेगा या औरत कमज़ोरी की वजह से हलाक हो जायेगी तो इस सूरत में रमज़ान में रोज़ा इफ़्तार करे और बाद में रोज़ा क़ज़ा कर ले।

हालते सफ़र में रोज़ा

क़ुरआन ने जहां सफ़र की हालत रोज़ा न रखने की इजाज़त दी है वहां कठिनाई का स्तर नहीं बताया है। आम तौर पर सफ़र में कुछ न कुछ मशक़्क़त होती है इसलिये हालते सफ़र में इफ़्तार (रोज़ा न रखने) की इजाज़त है। लिहाज़ा आजकल के आरामदेह सफ़र में भी इफ़्तार करना जायज़ है और अगर रोज़ा रख ले तो ज़्यादा बेहतर है। (शामी: 3/405)

हज़रत आयशा रज़ि0 फ़रमाती हैं कि हज़रत हम्ज़ा बिन अम्र असलमी रज़ि0 ने आप स0अ0 से अर्ज़ किया कि मैं सफ़र में भी रोज़ा रखूं और वो बहुत कसरत से रोज़ा रखने वाले सहाबी थे तो आपने जवाब में इरशाद फ़रमाया तुम्हारी मर्ज़ी हो तो रोज़ा रखो और जी चाहे तो रोज़ा न रखो। (मुस्लिम 2625)

रोज़े का कफ़्फ़ारा

कफ़्फ़ारे में पहले नम्बर पर ग़ुलाम का आज़ाद करना है लेकिन अब ग़ुलामों का चलन नहीं है इसलिये बज़ाहिर ये मुमकिन नहीं है।

कफ़्फ़ारे की दूसरी शक्ल दो महीने रोज़ा रखना है लेकिन इसके लिये ज़रूरी है कि ये रोज़े लगातार रखें जायें, उनका क्रम न टूटे। अगर उन रोज़ों के बीच रमज़ान का महीना या अय्याम तश्रीक़ आ गये तो क्रम टूट जायेगा और फिर से रोज़े रखने पड़ेंगे। यही हुक्म उस वक़्त भी होगा जब बीमार हो जाये या औरत निफ़ास (प्रस्व) की हालत में हो जाये, यद्यपि अगर बीच में औरत को माहवारी आये तो वो रोज़े रखना बन्द कर दे, और जब रुक जाये तो जितने रोज़े बाक़ी रह गये थे केवल वही रख ले फिर से रखने की ज़रूरत नहीं है।

और अगर किसी को रोज़ा रखने की भी ताक़त नहीं है 60 ग़रीबों को दो वक़्त का खाना खिलाये या हर ग़रीब को सदक़–ए–फित्र के बराबर ग़ल्ला दे यानि आधा साअ (1 किलो 633 ग्राम) गेहूं या एक साअ (3 किलो 266 ग्राम)

जौ या खजूर या उन चीज़ों की क़ीमत के बराबर कोई दूसरी चीज़ या नक़द रूपये दे। अगर इस तरह करने के बजाये किसी एक ग़रीब को साठ दिन तक दो वक़्त खाना खिला दे, तब भी कफ़्फ़ारा अदा हो जायेगा।

कुछ नये मसले और उनका शरई हुक्म

पान, तम्बाकू और सिगरेट–बीड़ी का हुक्म

पान तम्बाकू की पीक अगर कोई निगल लेता है तो बिल्कुल साफ़ बात है कि उसने एक चीज़ हलक़ से नीचे उतार ली, लिहाज़ा इससे रोज़े के चले जाने में कोई शक की बात ही नहीं है लेकिन कुछ लोग पीक निगलते नहीं है सिर्फ़ पान व तम्बाकू चबाकर उसे थूक देते हैं, इसलिये कुछ लोगों को शुब्हा होता है कि उससे शायद रोज़ा नहीं टूटता क्योंकि फ़ुक़्हा किराम ने फ़रमाया है कि किसी चीज़ के चबाने से रोज़ा नहीं टूटता और इस शक्ल में सिर्फ़ चीज़ को चबाया गया खाया नहीं गया लेकिन ये शक ठीक नहीं है इसलिये कि खाने–पीने को रोज़ा तोड़ने वाला बताया गया है और उन चीज़ों के चबाने को भी खाना कहते हैं, फिर कुछ तो बहरहाल हलक़ के नीचे उतर जाता है साथ ही इसके आदी लोगों को इसमें ख़ास लज़्ज़त मिलती है लिहाज़ा न केवल ये कि उनसे रोज़ा टूट जायेगा, बल्कि अगर उन चीज़ों को जानबूझ कर इस्तेमाल किया गया तो कफ़्फ़ारा भी लाज़िम होगा।

इसी हुक्म में गुल से दांत मांजना भी है। इसलिये कि इसमें भी ख़ास लज़्ज़त मिलती है और कुछ हिस्सा के अन्दर जाने का बहुत हद तक संभावना रहती है।

जहां तक बीड़ी–सिगरेट इत्यादि का संबंध है तो उसमें जानबूझ कर धुआं अन्दर लिया जाता है और जानबूझ कर धुआं अन्दर लेने से रोज़ा टूट जाता है। अतः इन सारी चीज़ों से परहेज़ ज़रूरी है।

मन्जन और टूथपेस्ट का हुक्म

आप स0अ0 ने मिस्वाक की बड़ी ताकीद फ़रमायी है। इस एतबार से फ़ुक़्हा ने रमज़ान में भी मिस्वाक करने की इजाज़त दी है चाहे मिस्वाक की लकड़ी सूखी हो या गीली लेकिन अगर मिस्वाक की तरी उसकी हलक़ के नीचे उतर जाये तो रोज़ा टूट जाता है लिहाज़ा रोज़े की हालत में मिस्वाक करते हुए इसका ख़्याल रखना चाहिये कि मिस्वाक की तरी या लकड़ी का कोई हिस्सा हलक़ से नीचे न उतरने पाये।

जहां तक मन्जन व टूथपेस्ट इत्यादि का संबंध है तो उनका हुक्म मिस्वाक के हुक्म से अलग है इसलिये कि इनमें ज़ायक़ा बहुत बढ़ा हुआ होता है, लिहाज़ा जिस तरह फ़ुक़्हा ने फ़रमाया कि किसी ज़रूरत के बग़ैर किसी चीज़ का चबाना मकरूह है, उसी तरह इन सब चीज़ों का भी हुक्म होगा, अलबत्ता किसी ख़ास ग़रज़ से अगर उन चीज़ों से दांत साफ़ करे तो इन्शाअल्लाह कराहत नहीं होगी।

आक्सीजन का हुक्म

दमे के मरीज़ को दौरा पड़ने के वक़्त आक्सीजन दी जाती है। रोज़े की हालत में इस तरह आक्सीजन लेने का क्या हुक्म होगा?फ़िक़्ही जुज़ को सामने रखा जाये तो ख़्याल होता है कि अगर होता है कि अगर आक्सीजन के साथ कोई दवा न हो तो रोज़ा नहीं टूटना चाहिये क्योंकि ये सांस लेना है और सांस लेने के ज़रिये हवा लेने से रोज़ा नहीं टूटता है और न उसे खाने–पीने में गिना जाता है। अगर इसके साथ दवा के कण भी हों तो फिर उससे रोज़ा टूट जायेगा। (जदीद फ़िक़्ही मसले : 188/1)

जहां तक दमे के मरीज़ के लिये इन्हेलर (Inhaler) के प्रयोग का संबंध है तो चूंकि इसमें दवा मिली हुई होती है लिहाज़ा इससे रोज़ा टूट जायेगा।

इन्जेक्शन और ड्रिप लगवाना

उलमा की सहमति इसी पर है कि इन्जेक्शन चाहे किसी भी प्रकार का हो उससे रोज़ा नहीं टूटेगा चाहे रग में लगाया जाये या गोश्त में। यही हुक्म ड्रिप (Drip) लगवाने का भी है, लेकिन बग़ैर किसी ग़रज़ के बेहतर यही है कि दिन में न लगवाये, ज़रूरत हो तो दिन में भी लगवा सकता है, लेकिन सिर्फ़ इस मक़सद से ड्रिप लगवाना कि बदन में ताक़त आ जाये और प्यास में कमी हो जाये मकरूह है।

ज़बान के नीचे दवा रखना

फ़ुक़्हा ने अनावश्यक किसी चीज़ को मुंह में रखने और चखने को मकरूह क़रार दिया है, यद्यपि ये स्पष्ट किया गया है कि अगर किसी कारण से ऐसा करे तो कराहत नहीं होगी। कारण की मिसाल में फ़ुक़्हा ने लिखा है कि शौहर

अगर बदअख़लाक़ और सख़्त मिज़ाज वाला हो तो उसकी बीवी के लिये नमक इत्यादि का पता लगाने के लिये चखना जायज़ होगा। लेकिन साथ ही ये साफ़ है कि अगर कोई ऐसी चीज़ मुंह में रखी या चबाई जिसका हलक़ के नीचे उतर जाना विश्वस्नीय है तो रोज़ा टूट जायेगा। इसकी मिसाल में फुक़्हा ने कुछ गोंदो का नाम लिया है। शायद इसी वजह से हमारे उलमा ने पान तम्बाकू इत्यादि के मुंह में रखने को रोज़ा तोड़ने वाला बताया है। इसलिये कि इसका असर साफ़ तौर पर हलक़ के नीचे पहुंच जाते हैं और तम्बाकू की तलब पूरी हो जाती है।

इस तफ़्सील के बाद हम आसानी से फ़ैसला कर सकते हैं कि "इन्जाइना" (दिल का रोग) के मरीज़ों के लिये (Angina) इस ज़रूरत से कहीं बढ़कर है जिसके तहत बीवी को नमक चखने की छूट दी गयी है और सवाल केवल ये रह जाता है कि ये दवा हलक़ के नीचे तो नहीं उतरती? अगर एहतियात के बावजूद दवा के ज़र्रात ख़ास गोंद की तरह हलक़ के नीचे उतर जाते हों तो उसके मुंह में रखने से रोज़ा टूट जायेगा और ज़बान के नीचे रखने के बाद इफ़ाक़ा हो जाने से लगता है ज़ाहिरी तौर पर यही बात है। लेकिन विशेषज्ञों की राय है कि ऐसा नहीं है, इसको देखते हुए कहा जा सकता है कि जहां तक हो सके रोज़ेदार इस गोली का इस्तेमाल न करे, लेकिन इसके इस्तेमाल से रोज़ा उसी वक़्त टूटेगा जब दवा मिला हुआ लुआब हलक़ के नीचे उतर जाये। सिर्फ़ जबान के नीचे गोली रखना रोज़ा टूटने की वजह नहीं होगी।

पेशाब के स्थान तक नली का पहुंचना

यदि मर्द के मुसाना तक नली पहुंचाई जाये तो इससे रोज़ा नहीं टूटेगा चाहे नली सूखी हो या गीली इससे दवा पहुंचाई जाए या नहीं और औरत के मुसाना में नली पहुंचाई जाए तो यदि नली गीली है तो या इससे दवा पहुंचाई गई है तो रोज़ा टूट जाएगा लेकिन अगर नली सूखी हो और इससे दवा भी न पहुंचाई गई हो तो रोज़ा नहीं टूटेगा।

इन्हेलर का इस्तमाल

जिन लोगों को दमे की शिकायत होती है उनको इन्हेलर के ज़रिये दवा का इस्तेमाल करना पड़ता है। इसके ज़रिये पाउडर का बहुत छोटा कण फेफड़ों तक पहुंचाया जाता है। इलाज के इस तरीक़े के ज़रिये दवा के इस्तेमाल से रोज़ा टूट जायेगा। इसलिये फ़िक़ के नज़रिये से साफ़ ज़ाहिर हो रहा है कि मनाफ़िज़–ए–अस्लिया (मुंह, दिमाग, नाक, कान, अगली–पिछली शर्मगाहें) से जब किसी चीज़ को दाख़िल किया जा रहा हो तो केवल दाख़िले से रोज़ा टूट जाता है और इन्हेलर के इस्तेमाल में बहरहाल दख़ल होता है चाहे दवा कम ही क्यों न हो।

भाप की शक्ल में दवा का इस्तेमाल

निमोनिय और कई दूसरी बीमारियों में भाप के ज़रिये भी दवा इस्तेमाल की जाती है। ये इस्तेमाल कभी दवा को पानी में डालकर और पानी को खौलाकर उसकी भाप मुंह और नाक से लेकर किया जाता है और कभी ये काम कुछ यन्त्रों के द्वारा किया जाता है। बहरहाल भाप चाहे किसी भी यन्त्र की मदद से ली जाये या सादा तरीक़े से, दोनों हालतों में रोज़ा टूट जायेगा, इसके लिये फुक़्हा ने साफ़ किया है कि जानबूझ कर धुआं हलक़ के नीचे उतारने से रोज़ा टूट जाता है और ये बात इसमें मुकम्मल तौर पर पायी जाती है।

बवासीरी मस्सों पर मरहम लगाने का आदेश

अगर पीछे के रास्ते से किसी दवा का प्रयोग किया जाए और दवा हुक़्ना (पिछली शर्मगाह का भीतरी भाग) लगाने के स्थान तक पहुंच जाए तो रोज़ा टूट जाता है। इसलिए फुकहा ने इसको भी हुक़्ना लगाने के स्थान में सम्मिलित किया हैं जबकि फुकहा ने स्पष्ट किया है कि यदि दवा हुक़्ना लगाने के स्थान तक न पहुंचे तो रोज़ा नहीं टूटेगा।

इस व्याख्या से स्पष्ट हो गया है कि कोई दवा या मरहम लगाने से या इसको पानी से तर करके चढ़ाने से रोज़ा नहीं टूटेगा इसलिए कि जानकारों का कहना है कि बवासीरी मस्से हुक़्ना लगाने के स्थान से बहुत नीचे होते हैं।

रोग की पुष्टि के लिए यन्त्रों का प्रयोग

अगर रोग की खोज के लिए पीछे के गुप्तांग में किसी यन्त्र की सहायता ली जाए तो अगर यह यन्त्र सूखे हैं और इनका एक सिरा बाहर है जैसा कि आमतौर पर होता है तो इन यन्त्रों को अन्दर डालने से रोज़ा नहीं टूटेगा लेकिन अगर यन्त्र पर कोई तेल या ग्रीस जैसी चीज़ लगाकर इसे अन्दर किया गया है तो रोज़ा टूट जाएगा।

यही आदेश किसी औरत के गुप्तांग में खोज के लिए किसी यन्त्र को प्रवेश कराने का भी है।

रमज़ानुल मुबारक में औरतों के मसाइल

औरत सुबह सादिक़ के बाद माहवारी से पाक हो

अगर औरत सुबह सादिक़ के बाद दिन में किसी भी वक़्त माहवारी या प्रस्व से पाक हुई तो आज के दिन वो रोज़ा नहीं रखेगी बल्कि बाद में उस दिन की क़ज़ा करेगी, अलबत्ता रोज़ेदारों की तरह शाम तक खान–पीने से परहेज़ करे। (तन्वीरुल अबसारः 3/342)

अगर औरत सुबह सादिक़ से पहले माहवारी से पाक हो गयी तो उस सूरत में तफ़्सील ये हैः

अगर वो दस दिन पूरे माहवारी में रहकर पाक हुई है, तो अब चाहे सुबह सादिक़ से पहले उसे गुस्ल का मौक़ा मिला हो या न मिला हो, बहरहाल वो अगले दिन का रोज़ा रखेगी।

अगर दस दिन से कम में औरत पाक हुई है तो ये देखा जायेगा कि सुबह सादिक़ से पहले वो गुस्ल करके पाक हो सकती है या नहीं? अगर इतना वक़्त है कि पाक हो सकती है तो उस पर अगले दिन का रोज़ा रखना ज़रूरी होगा, और अगर इतना वक़्त नहीं है कि गुस्ल कर सके जैसे कि ऐन सुबह सादिक़ के वक़्त पाक हुई है तो अब उस पर अगले दिन का रोज़ा रखना जायज़ नहीं है, बल्कि बाद में क़ज़ा करेगी। (हिन्दियाः 1/207)

औरत के लिये हैज़ के दिन उज़्र हैं

औरत पर अगर कफ़्फ़ारा लाज़िम हो जाये तो उसके (माहवारी) नापाकी के दिन उज़्र समझे जायेंगे, इन दिनों में रोज़ा नहीं रखेगी, रोज़ा न रखने से उसके कफ़्फ़ारे के रोज़े के क्रम में कोई फ़र्क़ नहीं पड़ेगा। लेकिन पाकी के फ़ौरन बाद लगातार रोज़े रखने होंगे।

मुस्तहाज़ा का रोज़ा

माहवारी या प्रस्व की मुद्दत से ज़्यादा दिनों तक ख़ून आये, इसी तरह आदत वाली औरतों को आदत से ज़्यादा दिन तक ख़ून आये, ऐसी औरतों के लिये रोज़े की क़ज़ा नहीं है बल्कि वो इस्तहाज़ा (माहवारी के बाद भी ख़ून आना) का ख़ून आने के बावजूद रोज़ा रखेंगी। (रद्दुल मुख़्तारः 3/390)

गर्भवती और दूध पिलाने वाली औरतों के लिये छूट

गर्भवती औरतों के गर्भ के कारण से जिस्मानी परेशानियों का सामना हो और रोज़ा रखने में मुश्किल पेश आ रही हो तो उसके लिये इजाज़त है कि रमज़ान में रोज़ा न रखे और बाद में क़ज़ा कर ले, इस पर कोई गुनाह नहीं होगा। इसी तरह दूध पिलाने वाली औरत के लिये भी इजाज़त है कि बाद में सिर्फ़ छूटे हुए रोज़ों की क़ज़ा कर ले। आप स0अ0 ने फ़रमायाः

"गर्भवती और दूध पिलाने वाली औरत से रोज़ा माफ़ फ़रमा दिया।" (तिरमिज़ीः 1750)

रोज़े की हालत में बच्चों को दूध पिलाना

औरतें जिहालत की वजह से समझती हैं कि रोज़े की हालत में बच्चों को दूध पिलाने से रोज़ा टूट जाता है। ये ख़्याल ठीक नहीं है। इसलिये कि रोज़ा किसी चीज़ के पेट या दिमाग़ में दाख़िल होने की वजह से टूटता है न कि जिस्म के किसी चीज़ के निकलने से। नवजात शिशुओं को दूध पिलाने से रोज़े पर कोई असर नहीं पड़ेगा। (रमज़ान के शरई अहकामः 192)

हैज़ को रोकने वाली गोलियों का इस्तेमाल

औरतों को हैज़ आना एक फ़ितरी काम है और फ़ितरी काम को रोकने से जिस्म को नुक़सान पहुंच सकता है। अल्बत्ता लोगों के साथ रोज़ा रखने की ख़्वाहिश में हैज़ न आने वाली गोलियों का इस्तेमाल करना चाहे तो उसकी इजाज़त है।

औरतों के लिये तरावीह

रमज़ान के महीने में मर्दों की तरह औरतों के लिये

भी तरावीह सुन्नत–ए–मुअक्कदा है, सिर्फ़ औरतें अगर जमाअत के साथ नमाज़ पढ़े तो कराहत के साथ नमाज़ हो जायेगी।

बाज़ घरानों में औरतों की जमाअत क़ायम हो जाती है और उसके लिये हाफिज़ या इमाम तय किया जाता है, ऐसी सूरत में अगर इमाम के पीछे मर्द या औरतों में कोई इमाम का महरम हो (मां, बहन, बीवी) तो बिला कराहत सभी की नमाज़ हो जायेगी, और अगर इमाम के पीछे कोई मर्द या इमाम का महरम मौजूद नही तो इस सूरत में नमाज़ कराहत के साथ दुरुस्त होगी।

(हिन्दियाः 1/85)

औरतों का एतिकाफ़

औरतों के लिये एतिकाफ़ करना सुन्नत है, लेकिन ये ज़रूरी है कि शौहर से इजाज़त ले ले। उनके लिये मस्जिद में एतिकाफ़ करना मकरूह है, उनके लिये एतिकाफ़ की सबसे बेहतरीन जगह घर है और घर में कोई ऐसी जगह जो पहले ही से नमाज़ के लिये तय हो वहीं एतिकाफ़ करे ये इमाम अबू हनीफ़ा की राय है क्योंकि इस दौर में औरतों का मस्जिद में मोतकिफ़ होना फ़ित्ने से ख़ाली नहीं, इसलिये रसूलुल्लाह स0अ0 ने औरतों को मस्जिद में नमाज़ अदा करने के मुक़ाबले में घर में अदा करने को बेहतर क़रार दिया है। इसी तरह मुस्तहाज़ा (जिसे माहवारी के बाद भी ख़ून आये) औरत के लिये एतिकाफ़ करना दुरुस्त है।

भ्रूण तक यन्त्रों का पहुंचना :

भ्रूण की सफाई के लिए और बच्चेदानी के मुंह को बड़ा करने के लिए जो यन्त्र (Dilators) प्रयोग किये जाते हैं और आन्तरिक रहम को खुरचने का यन्त्र (Curette) अगर इन पर कोई तेल इत्यादि लगाकर इन को दाखिल किया जाए तो रोज़ा टूट जाएगा और इनको सूखा प्रवेश कराने से रोज़ा नहीं टूटेगा।

लेकिन यदि सूखा प्रवेश कराकर एक बार बाहर निकाल कर बिना साफ किये फिर प्रवेश करा दिया जाए तो रोज़ा टूट जाएगा।

औरत के गुप्तांग में दवा रखना :

यदि गुप्तांग में दवा रखी जाए या रखी ऊपरी भाग में जाए लेकिन आन्तरिक भाग तक पहुंच जाए तो रोज़ा टूट जाएगा चाहे दवा सूखी हो या गीली।

इसी तरह मर्द या औरत किसी दवा या पानी इत्यादि से तर उंगली अपनी शर्मगाह में दाख़िल करेगा तो फ़ुक़्हा के अनुसार रोज़ा टूट जायेगा। यहां तक कि लेडी डाक्टर अगर सूखी उंगली अन्दर ले जाये तो रोज़ा नहीं टूटेगा लेकिन अगर दोबारा गीली उंगली ले जाती है तो रोज़ा टूट जायेगा।

(हिन्दियाः 1/204)

औरतें और ईद की नमाज़

रसूलुल्लाह स0अ0 के ज़माने में औरतों को ईद की नमाज़ की इजाज़त थी। (तिरमिज़ीः 539)

आप स0अ0 के ज़माने में ख़ैर ही ख़ैर थी, औरतों में हया थी, मर्द भी अपनी निगाह नीची रखते थे, और फ़ित्ने का अन्देशा भी कम था, आज की तरह बेहयाई आम नहीं थी, मौजूदा दौर में औरतों को ईद की नमाज़ की इजाज़त नहीं है।

हज़रत आयशा रज़ि0 फ़रमाती हैः

"औरतों में अब जो कैफ़ियत पैदा हो गयी है, अगर आप स0अ0 ने देखा होता तो उनको मस्जिद जाने से इसी तरह मना फ़रमाया होता जैसे कि बनी इस्राईल की औरतों को मना कर दिया गया था।"

(बुख़ारीः 869)

ज़ाहिर है कि हज़रत आयशा रज़ि0 के ज़माने के एतबार से अब समाजी हालात और बदतर हो गये हैं। फ़ित्ने के मौक़े भी बढ़ गये हैं, औरतों की ऐश व आराइश का जज़्बा भी पहले से कहीं बढ़ गया है, इसीलिये मौजूदा हालात में भी औरतों का ईद वग़ैरह की नमाज़ में शिरकत करना मुनासिब नहीं।

और न ही ईद अकेले घर पर पढ़ सकती हैं, इसलिये कि औरतों पर जुमा और ईद वाजिब ही नहीं रखा गया है, इसके बरख़िलाफ़ा पर्दा और घर में रहने को ज़रूरी क़रार दिया गया। (अलएहज़ाबः 33)

इसलिये औरतों को घर में रहकर कुरान के हुक्म पर अमल करके सवाब हासिल होगा, और ईदगाह में जायें और नाख़ुशगवाहर हालात पेश आयें तो उनसे दीन और दीन की जगहों की बदनामी होगी, इसलिये औरतों का ईदैन में न जाना ही ज़्यादा बेहतर है।

तरावीह की नमाज़

तरावीह सुन्नते मुअक्कदा है मर्दों के लिये भी और औरतों के लिये भी। अगर कोई तरावीह के सुन्नत होने का इनकार करे तो उसे फ़ुक़्हा ने गुमराह के खाने में रखा है और ऐसे शख़्स की गवाही को नाक़ाबिले क़ुबूल क़रार दिया गया है।

हज़रत इमाम अबू हनीफ़ा रह0 से खुद उनके शागिर्द हसन बिन ज़ियाद रज़ि0 ने नक़ल किया है:

"यानि तरावीह की नमाज़ सुन्नत है, इसका तर्क करना जायज़ नहीं।"

इससे कई किताबों में तरावीह के सुन्नत या मुस्तहब होने के संबंध में जो संदेह है वो समाप्त हो जाता है।

तरावीह की रकअतें

रमज़ानुल मुबारक की एक श्रेष्ठ इबादत तरावीह की नमाज़ है जो अपनी अलग शान रखती है इस नमाज के ज़रिये रमज़ान में मस्जिदों की रौनक़ बढ़ जाती है और इबादात के शौक़ में ग़ैर मामूली इज़ाफ़ा हो जाता है।

आप स0अ0 ने रमज़ानुल मुबारक में तीन दिन मस्जिद–ए–नबवी में तरावीह की नमाज़ बा जमात पढ़ाई लेकिन जब भीड़ बढ़ने लगी और सहाबा किराम का गैरमामूली शौक़ देखा तो आप को ख़तरा हुआ कि कहीं ये नमाज़ उम्मत पर फ़र्ज़ न कर दी जाये तो आप स0अ0 ने ये सिलसिला ख़त्म कर दिया। (बुख़ारी 2012 – मुस्लिम 1783)

सालबा बिन अबी मालिक रह0 रिवायत करते हैं कि एक बार आप स0अ0 मस्जिद तश्रीफ़ लाये तो देखा कि मस्जिद के एक कोने में कुछ लोग जमाअत से नमाज़ पढ़ रहे हैं। आप स0अ0 ने पूछा कि ये लोग क्या कर रहे हैं? तो किसी ने बताया कि ऐ अल्लाह के रसूल स0अ0 ये वो लोग हैं जिनको कुरआन मजीद हिफ़्ज़ नहीं है। हज़रत उबई इब्ने काब रज़ि0 नमाज़ में कुरआन करीम पढ़ रहे हैं और ये लोग उनकी इक़्तिदा में नमाज़ पढ़ रहे हैं। ये सुनकर आप स0अ0 ने फ़रमाया कि उन्होंने बहुत अच्छा किया और आप ने उनके बारे में कोई नागवारी की बात इरशाद नहीं फ़रमायी। (सुननुल कुबरा अल बैहिक़ी: 2/697)

इस हदीस की तफ़्सील से मालूम हो गया कि नबूवत के दौर में रमज़ान की वो ख़ास नमाज़ जिसे बाद में तरावीह का नाम दिया गया यक़ीनन पढ़ी जाती रही है और सहाबा उस नमाज़ से बख़ूबी वाक़िफ़ थे। और अकेले–अकेले और कभी जमाअत से पढ़ा करते थे। दौरे सिद्दीकी और दौरे फ़ारूक़ी के शुरूआती ज़माने तक ये सिलसिला यूं ही जारी रहा उसके बाद हज़रत उमर फ़ारूक़ रज़ि0 ने ये देखकर कि लोग मस्जिद में अकेले और छोटी छोटी टोलियां बनाकर तरावीह की नमाज़ पढ़ते हैं। आप ने मुनासिब समझा कि तरावीह की बाक़ायदा नमाज़ क़ायम कर दी जाये। इसीलिये आप ने हज़रत उबई इब्ने काब रज़ि0 को तरावीह का इमाम तय फ़रमाया और हज़रात सहाबा किराम हज़रत उबई इब्ने काब की इक़्तिदा में तरावीह की नमाज़ पढ़ने लगे। (बुख़ारी 2010)

अक्सर रिवायात और आसारे सहाबा से बीस रकआत तरावीह का पता चलता है। लोग हज़रत उमर बिन अल ख़त्ताब रज़ि0 के ज़माने में 23 रकआत पढ़ते थे। (मुअत्ता 448)

हज़रत साइब बिन यज़ीद रज़ि0 से रिवायत है कि हज़रत उमर बिन ख़त्ताब रज़ि0 के ज़माने में बीस रकआत तरावीह और वित्र पढ़ा करते थे। (नस्बुर्राया: 2/154)

हज़रत उमर बिन ख़त्ताब रज़ि0 ने एक शख़्स को हुक्म दिया कि वो लोगों को बीस रकआत पढ़ाएं। (मुसन्नफ़ अबी शेएबा 7764)

हज़रत उबई इब्ने काब रज़ि0 रमज़ान में लोगों को बीस रकआत पढ़ाते थे और तीन रकआत वित्र पढ़ते थे। (मुसन्नफ़ अबी शेएबा 7766)

तरावीह सुन्नते मुअक़्क़दा है। मर्दों के लिये भी और औरतों के लिये भी। अगर कोई तरावीह के मशरूअ व सुन्नत होने का इनकार करे तो फुक़्हा ने गुमराह के हिस्से में रखा है। और ऐसे शख़्स की गवाही को नाक़ाबिले कुबूल क़रार दिया गया है।

हज़रत इमाम अबू हनीफ़ा से उनके शार्गिद हसन बिन ज़ियाद ने नक़ल किया है कि तरावीह की नमाज़ सुन्नत है उसका छोड़ना जायज़ नहीं। इससे कई किताबों में तरावीह के सुन्नत या मुस्तहब होने के संबंध में जो शक है वो दूर हो जाता है।

तरावीह की नमाज़ में दस सलाम के साथ बीस रकअतें हैं: तरावीह की रकअतों के सिलसिले में कई इख़्तिलाफ़ पाये जाते हैं लेकिन हक़ीक़त यही है कि अइम्मा अरबा 20/रकआत पर सहमत हैं। हज़रत उमर फ़ारूक़ रज़ि0 के ज़माने में मुसलमानों में पाबन्दी से 20/रकआत तरावीह का मामूल रहा है और आज तक हरमैन शरीफ़ैन में मामूल क़ायम है।

जिस तरह मस्जिद में तरावीह की नमाज़ अदा की जाती है उसी तरह घर में अदा की जा सकती है। लेकिन ये ख़्याल रहे कि तरावीह सुन्नते किफ़ाया है और अगर किसी मस्जिद में तरावीह की जमाअत बिल्कुल ही न हो तो उस मुहल्ले के सभी नमाज़ी गुनहगार होंगे अलबत्ता अगर कुछ लोगों ने मस्जिद में अदा की और कुछ ने अपने घर में हर्ज नहीं। वो महज़ जमाअत की फ़ज़ीलत का तारिक होंगे। इसी तरह अगर घर पर नमाज़ जमाअत के साथ अदा कर ली तो जमाअत की फ़ज़ीलत तो हासिल होगी अलबत्ता मस्जिद की फ़ज़ीलत से महरूमी रहेगी। हां अगर दीनी एतबार से किसी की इतनी वजाहत हो कि उसकी ग़ैर हाज़िरी की वजह से मस्जिद में नमाज़ियों की संख्यां प्रभावित हो सकती हो तो उसके लिये मस्जिद में ही नमाज़ अदा करना बेहतर होगा।

नियत

तरावीह की नमाज़ पढ़ते हुए "तरावीह" या "सुन्नत वक़्त" या "क़यामुल लैल रमज़ान" की नियत करे, सिर्फ़ नमाज़ या नफ़िल नमाज़ का इरादा काफ़ी नहीं क्योंकि ये एक मुस्तक़िल नमाज़ है। इसी आधार पर अगर फ़र्ज़ पढ़ने वाले इमाम या मुत्लक़ नफ़िल नमाज़ पढ़ने वाले इमाम की इक़्तदा में तरावीह की नमाज़ अदा की जाये तो ऐसा करना ठीक नहीं होगा, कई हज़रात की राय ये है कि हर दो रकअत पर मुस्तक़िल नियत करे लेकिन ज़्यादा सही ये है कि एक बार की नियत काफ़ी होगी, इसलिये कि तमाम रकआत एक ही नमाज़ के दर्जे में है।

तरवीहा

तरवीहा (चार रकआत के बाद बैठना) के लिये कोई ख़ास इबादत तय नहीं है बल्कि अख़्तियार है चाहे ज़िक्र करें या तिलावत करें, या अकेले–अकेले नफ़िल पढ़ें। कई फुक़्हा से ये दुआ पढ़ना मनकूल है अतः जिसका जी चाहे इसे पढ़ सकता है। (शामी 2/497)

विभिन्न आदेश: अगर तरावीह में कोई रकआत फ़ासिद हो गयी तो इमाम को उसमें पढ़ा गया कुरआन दोहरा लेना चाहिये।

बेहतर ये है कि एक ही इमाम 20/रकआते पढ़ांए अगर दो या उससे ज़्यादा पढ़ांए तो भी अफ़ज़ल है कि तरावीह की रकआत पूरी होने के बाद इमाम बदला जाये।

नाबालिग़ जो बाशऊर हो चुका हो, कई फुक़्हा ने उसकी इमामत की तरावीह में इजाज़त दी है, लेकिन अक्सर फुक़्हा इससे मना करते हैं। इसलिये नाबालिग़ की इमामत सही नहीं है।

अगर तीन रकआतें पढ़ी मगर दूसरी रक़आत पर बैठ जाये तो दो सही हो गयीं और तीसरी ख़राब हो गयी। तीसरी रकआत में जो कुरआन का हिस्सा पढ़ा गया है तो उसे दोहरायें और अगर एक सलाम से तीन रकआतें पढ़ी और दूसरी रकआत में बैठा नहीं तो तीनों रकआतें बातिल हो गयीं इसमें पढ़ा गया कुरआन दोहराया जायेगा और अगर एक सलाम से चार रकआतें पढ़ी और दूसरी रकआत पर बैठा तो चारों सही हो गयीं और अगर एक सलाम से चार रकअत पढ़ी और पहले क़ादे में नहीं बैठा तो सिर्फ़ आख़िर की दो रक़आत मान्य होंगी और पहली दो रकआतें बातिल हो जायेंगी। इन दो रकआतों में जो कुरआन पढ़ा है उसे दोहराया जायेगा। (शामी 2/421)

तरावीह में कोई सूरत या आयत छूट गयी, फिर आगे की रकआत में इसको दोहराया गया तो बेहतर है कि उसके बाद पढ़े हुए कुरआन को भी दोहरा दे।

अगर किसी की तरावीह की कुछ रकआत जमाअत से छूट जाये तो वो तरवीहा के वक़्त में रकआत पूरी कर ले अगर

(शेष पेज 30 पर)

मुफ़्ती ज़ाहिद हुसैन नदवी

एतिकाफ़ के कुछ मसाले

एतिकाफ़ का शाब्दिक अर्थ लब्स यानि ठहरने और किसी चीज़ को ज़रूरी पकड़ने के हैं और चूंकि एतिकाफ़ करने वाला अल्लाह तआला के क़रीब होने की नियत से मस्जिद में ठहर जाता है और मस्जिद के आदाब का ख्याल करता है लिहाज़ा इस काम को एतिकाफ़ कहा जाता है।

एतिकाफ़ के प्रकार

वजिब एतिकाफ़: ये नज़र करने से वाजिब होता है। जैसे कोई शख़्स कहे कि मेरे ऊपर इतने दिन का एतिकाफ़ है। इस प्रकार कह देने से उतने दिन का एतिकाफ़ वाजिब हो जायेगा। या संबंधित करके इस तरह कहे कि मैं मुक़द्दमा जीत गया या बीमारी से ठीक हो गया तो इतने दिन का एतिकाफ़ करूंगा तो अगर अल्लाह के फज़ल से वो काम हो जाये निश्चित दिनों का एतिकाफ़ वाजिब होगा। (फ़तावा शामी: 41/2)

इस एतिकाफ़ के लिये रोज़ा शर्त है चाहे करते वक़्त रोज़ा रखने की नियत न की हो। इसलिये कि अबूदाऊद में हज़रत आयशा रज़ि0 से रिवायत है कि "रोज़े के बग़ैर एतिकाफ़ नहीं हो सकता" यही कारण है कि अगर सिर्फ़ रात के एतिकाफ़ की नियत करे तो सही नहीं होगा। फ़तावा शामी में इसके वाजिब होने की दलील बुख़ारी में आने वाली आंहज़रत स0अ0 की हदीस है कि आप स0अ0 ने फ़रमाया: जो अल्लाह तआला की इताअत करने की नज़र माने उसे इताअत करना चाहिये और बुख़ारी की एक दूसरी रिवायत में है कि हज़रत उमर रज़ि0 ने अज़ किया: ऐ अल्लाह के रसूल स0अ0 मैंने नज़र मानी है कि मस्जिद में एक रात एतिकाफ़ करूं तो आप स0अ0 ने फ़रमाया: अपनी नज़र पूरी करो।

नफ़्ली एतिकाफ़ : जहां तक नफ़्ली एतिकाफ़ का संबंध है तो उसके लिये रोज़ा शर्त नहीं है। और ये कम वक़्त के लिये भी किया जा सकता है और ज़्यादा वक़्त के लिये भी और इस तरह भी नियत की जा सकती है कि मस्जिद में रहने तक एतिकाफ़ की नियत करता हूं। फिर मस्जिद से निकलते ही एतिकाफ़ ख़त्म हो जायेगा और जब तक मस्जिद में रहेगा एतिकाफ़ का सवाब मिलता रहेगा। अगर नियत ज़्यादा वक़्त की की थी और वक़्त को पूरा करने से पहले निकलना चाहता है तो कोई हर्ज नहीं है।

एतिकाफ़ सुन्नत-ए-मुअक्किदा: ये एतिकाफ़ आप स0अ0 पाबन्दी से हर साल रहज़ान के आख़िरी अश्रे में किया करते थे। जिस साल आप की वफ़ात हुई उस साल आप स0अ0 ने 20 दिन का एतिकाफ़ किया था इसीलिये बुख़ारी में अबूहुरैरा रज़ि0 की रिवायत है, "हर साल आप स0अ0 दस दिन का एतिकाफ़ किया करते थे और जिस साल आपका विसाल हुआ उस साल आपने बीस दिन का एतिकाफ़ किया।"

रमज़ान के आख़िरी अश्रे में मर्दों पर ये एतिकाफ़ ऐसी मस्जिद में करना सुन्नत-ए-मुअक्किदा वल किफ़ाया है जिसमें इमाम और मुअज़्ज़िन हों चाहे उसमें पांचों वक़्त की नमाज़ न होती हो।

सुन्नत अललकिफ़ाया होने का मतलब ये है कि अगर बस्ती के किसी एक शख़्स ने भी एतिकाफ़ कर लिया तो पूरी बस्ती वालों की तरफ़ से काफ़ी समझा जायेगा और सुन्नत की अदायगी हो जायेगी और किसी ने भी ये न किया तो सब सुन्नत को तरक करने के गुनहगार होंगे।

एतिकाफ़ की शर्तें

वाजिब और सुन्नत एतिकाफ़ उसी वक़्त सही होगा जब नीचे दी गयीं शर्तें पूरी हों

एतिकाफ़ की नियत होना बग़ैर नियत के ठहरने को एतिकाफ़ नहीं माना जायेगा।

एतिकाफ़ की मस्जिद में जमाआत होना। वीरान मस्जिद में एतिकाफ़ विश्वस्नीय नहीं होगा। यद्यपि औरत

घर में एतिकाफ़ कर सकती है।

एतिकाफ़ करने वाले का रोज़ादार होना। बग़ैर रोज़ा रखे हुए वाजिब और सुन्नत एतिकाफ़ विश्वस्नीय नहीं होगा।

एतिकाफ़ करने वाली का नजासत हैज़ या निफ़ास से पाक होना।

एतिकाफ़ करने वाले का अक़्ल वाला होना लिहाजा पागल का एतिकाफ़ विश्वस्नीय नहीं होगा।

मस्जिद से बाहर निकलना कब जायज़ है?

आप स0अ0 ने एतिकाफ़ की हालत में केवल बहुत ज़रूरी कामों के लिये मस्जिद से बाहर निकला करते थे। इसीलिये बुख़ारी मुस्लिम की एक रिवायत में आयशा रज़ि0 फ़रमाती हैः "आप स0अ0 सिर्फ़ मानवीय आवश्यकताओं के लिये घर में दाख़िल होते थे, अबूदाऊद की एक रिवायत में हज़रत आयशा रज़ि0 फ़रमाती हैं किः "एतिकाफ़ करने वाले की सुन्नत ये है कि न किसी मरीज़ की अयादत करे न ज़नाज़े में जाये न बीवी को शहवत से छुए न उससे जिमाअ करे और सिर्फ़ ऐसी ज़रूरतों के लिये निकले जिसके बग़ैर चारह नहीं है।"

मल-मूत्र के लिये निकलना: मल-मूत्र के लिये मस्जिद से बाहर निकलना जायज़ है इस ज़रूरत के लिये घर जाकर भी पूरा कर सकते हैं। आते जाते सलाम भी कर सकते हैं लेकिन अगर ठहर कर बात करेंगे तो एतिकाफ़ ख़राब हो जायेगा।

खाने के लिये निकलना: अगर कोई खाना लाने वाला न हो तो ख़ुद जाकर खाना ला सकता है इसलिये कि लाने वाला मौजूद न हो तो ये भी ज़रूरी ज़रूरतों में से है।

ग़ुस्ल वाजिब के लिये निकलना: अगर स्वप्न दोष हो गया तो ग़ुस्ल के लिये बाहर निकलना जायज़ है। लेकिन आम तौर पर ग़ुस्ल के लिये निकलना फ़ुक़्हा ने मना फ़रमाया है।

हालत-ए-इज़्तिरा में निकलना: है। अगर कोई शख़्स जबरन निकाल दे या मस्जिद टूट जाए जिसकी वजह से निकलना पड़े या उस मस्जिद में जान व माल का ख़तरा हो जाए तो उन सभी हालतों में उस मस्जिद के बजाए दूसरी मस्जिद में जाकर एतिकाफ़ कर लेना सही है इसकी भी इजाज़त है।

जुमा के लिये निकलना: शरई आवश्यकताओं में से ये भी है कि अगर ऐसी मस्जिद में एतिकाफ़ कर रहा है जहां जुमा नही होता है तो जुमा के लिए जामा मस्जिद जाना सही है। बल्कि इसकी रिआयत जरूरी है कि केवल इतनी देर दूसरी मस्जिद में ठहरे कि तहीयतुल मस्जिद पढ़ ले, सुन्नत अदा कर ले फिर ख़ुत्बे से जुमा के बाद की सुन्नतें अदा करने के बाद जल्द से जल्द अपनी मस्जिद में आ जाए देरी मकरूह है।

इलाज की ज़रूरत हो तो एतिकाफ़ करने वाले के लिये बाहर निकलना जायज़ है लेकिन एतिकाफ़ टूट जायेगा।

उलमा ने बीड़ी-हुक़्क़ा को शुमार किया है कि मस्जिद से बाहर जाकर हुक़्क़ा पीकर बदबू मिटाकर मस्जिद में आ जाना चाहिए। यही तरीक़ा उन लोगों को भी अपनाना चाहिए जो सिगरेट पान वग़ैरह के आदी हों।

जिस तरह मर्द का एतिकाफ़ मस्जिद से निकलने से टूट जाता है। उसी तरह औरत अगर एतिकाफ़ की ख़ास जगह छोड़कर आंगन में आवश्यक आवश्यकता के बग़ैर बाहर निकल आये तो उसका भी एतिकाफ़ टूट जायेगा।

एतिकाफ़ की हालत में अल्लाह जितनी तौफ़ीक़ दे इबादतों में लगा रहे जिसमें तिलावत, ज़िक्र और नवाफ़िल वग़ैरह का पढ़ना शामिल है। लोगों से बातचीत भी कर सकता है बल्कि इबादत समझकर ख़ामोश रहना मकरूह है। लेकिन फ़िज़ूल की बातों से बचना चाहिये। ज़रूरी बातें मोबाइल पर भी कर सकता है।

हज़रत सहल बिन साद रज़ि० नक़ल फ़रमाते हैं कि रसूलुल्लाह (स०अ०) का इरशाद है फ़रमाते हैं कि:
"जन्नत के आठ दरवाज़े हैं। उनमें से एक दरवाज़े का नाम "रेय्यान" है, जिसमें से सिर्फ़ रोज़ादार दाख़िल होंगे।"

"हज़रत अबूहरैरा रज़ि० फ़रमाते हैं कि आंहज़रत स०अ० ने इरशाद फ़रमाया कि जो भी (रोज़ो में) नाजायज़ बात करना और उस पर अमल करना न छोड़े तो अल्लाह तआला को उस आदमी के खाना-पीना छोड़ने की कोई ज़रूरत नहीं।" (बुख़ारी)

सदक़–ए–फ़ित्र

रोज़ेदार कितना ही एहतिमाम करे रोज़े के दौरान कुछ न कुछ कोताही हो ही जाती है। खाने–पीने और रोज़ा तोड़ने वाली चीज़ों से बचना तो आसान होता है लेकिन बेकार के कामों और नामुनासिब बातचीत से पूरी तरह से नहीं बच पाता। इसलिये इस तरह की कोताहियों की तलाफ़ी के लिये शरीअत में रमज़ानुल मुबारक के ख़त्म पर सदक़–ए–फ़ित्र के नाम से मानो कि रोज़े की ज़कात अलग से क़रार दी है, हज़रत अब्दुल्लाह बिन अब्बास रज़ि0 इरशाद फ़रमाते हैं:

"आप स0अ0 ने सदक़–ए–फ़ित्र को ज़रूरी क़रार दिया जो रोज़ेदार के लिये बेकार और बेहयाई की बातों से पाकीज़गी का ज़रिया है और ग़रीबों के खाने का इन्तिज़ाम है। जो शख़्स उसे ईद की नमाज़ के पहले अदा कर दे तो ये मक़बूल सदक़ा है और जो शख़्स ईद की नमाज़ के बाद अदा करे तो ये आम सदक़ों में से एक सदक़ा है।" (अबू दाऊद: 1609)

इस हदीस से मालूम हुआ कि सदक़–ए–फ़ित्र वाजिब होने के दो मक़सद हैं:

पहला मक़सद रोज़े की कोताहियों की तलाफ़ी।

दूसरा मक़सद उम्मत के ग़रीबों के लिये ईद के दिन रिज़्क़ का इन्तिज़ाम।

इसके लिये हैसियत वाले मुसलमानों पर लाज़िम है कि सदक़–ए–फ़ित्र वक़्त पर अदा करने का एहतिमाम करे, जैसा कि ऊपर की हदीस में फ़रमाया गया है कि ईद की नमाज़ से पहले सदक़–ए–फ़ित्र अदा करने का सवाब ज़्यादा है, इसी बुनियाद पर "हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने उमर रज़ि0" ईद से दो–तीन दिन पहले ही सदक़–ए–फ़ित्र अदा करते थे। (अबूदाऊद : 1610)

और ये मुनासिब भी होता है कि मुस्तहिक़ हज़रात पहले ही ईद की तैयारी कर सकें।

जो शख़्स जीवन की आवश्यक आवश्यकताओं के अलावा इतनी क़ीमत के माल का मालिक हो जिस पर ज़कात वाजिब हो सके उस पर ईदुलफ़ित्र के दिन सदक़–ए–फ़ित्र अदा करना वाजिब है।

सदक़–ए–फ़ित्र की मात्रा आधा साअ गेहूं (यानि 1 किलो 633 ग्राम) या एक साअ जौ या खजूर या उन चीज़ों की क़ीमत के बराबर कोई दूसरी चीज़ या नक़द रूपये है।

आजकल आधा सा के अनुसार एक सदक़े फ़ित्र की मात्रा लगभग 20–22 रूप्ये होती है जो बड़े मालदारों के लिये कोई हैसियत नहीं रखती इसलिये ऐसे लखपति और करोड़पति पूंजीपतियों को राय दी जानी चाहिये कि वो ज़्यादा सवाब हासिल करने के लिये निस्फ़ सा गेहूं की क़ीमत लगाने के बजाये एक सा खजूर या किशमिश का हिसाब लगाकर सदक़–ए–फ़ित्र अदा करें इसलिये कि इसमें उनको सवाब ज़्यादा मिलेगा और फ़क़ीरों को ज़्यादा फ़ायदा होगा। रिवायत में आता है हज़रत अब्दुल्ला इब्ने अब्बास रज़ि0 ने बसरा में ख़ुत्बा देते हुए इरशाद फ़रमाया आप स0अ0 ने एक सा खजूर या जौ या आधा सा गेहूं का सदक़ा ज़रूरी क़रार दिया गया है जो हर आज़ाद मर्द औरत छोटे बड़े पर लाज़िम है। लेकिन जब हज़रत अली रज़ि0 वहां पर तश्रीफ़ लाये तो देखा कि गेहूं का बाज़ारी भाव सस्ता है तो आप ने फ़रमाया अल्लाह तआला ने तुम्हारे ऊपर वुसअत फ़रमायी है इसलिये अगर तुम सदक़े फ़ित्र हर चीज़ की एक सा के हिसाब से निकालो तो ज़्यादा बेहतर है। (अबूदाऊद 1622)

इससे मालूम हुआ कि वुसअत रखने वाले साहबे हैसियत लोगों को वुसअत के साथ सदक़े फ़ित्र निकालना चाहिये।

नाबालिग़ बच्चों की तरफ़ से सदक़–ए–फ़ित्र: जो नाबालिग़ बच्चे ख़ुद किसी निसाब के मालिक न हो उनकी तरफ़ से उनके बाप पर सदक़–ए–फ़ित्र निकालना वाजिब है। अगर वो बच्चे ख़ुद साहबे निसाब हों तो उनके माल में से सदक़–ए–फ़ित्र निकाला जायेगा।

नासमझ या पागल औलाद की तरफ़ से सदक़–ए–फ़ित्र: अगर कोई बच्चा अक्ल के एतबार से कमज़ोर या पागल हो तो उसकी तरफ़ से सदक़–ए–फ़ित्र निकाला जायगा। अगर वो बड़ी उम्र का हो। (शेष : 28)

ईदुल फ़ित्र

हुज़ूर अकरम स0अ0 जब हिजरत फ़रमाकर मदीना मुनव्वरा तशरीफ़ लाये तो मदीना के लोग साल में दो दिन ख़ुशी मनाते थे। इन दोनों दिनों में ख़ूब खेल–कूद होता था और गाने–बजाने की मजलिस जमती थीं। मगर आप स0अ0 ने उन सब सिलसिलों को ख़त्म फ़रमा कर अल्लाह तआला के हुक्म से उन दोनों के बजाये दो ख़ुशी के दिन ईदुलफ़ित्र और ईदुलअज़्हा तय फ़रमाये। इन दिनों में ख़ुशी के इज़हार का प्रदर्शन खेल–कूद, लहू–लअब और तफ़रीहों के ज़रिये नहीं कराया गया बल्कि इस्लाम के मानने वालों को हुक्म हुआ कि वो ख़ुशी का इज़हार इस अन्दाज़ में करें कि ख़ुशी ज़ाहिर और बातिन से नुमायां हो सके।

इसी वजह से अल्लाह तआला ने ईमान वालों के लिये ख़ुशी के दिनों में बन्दगी का हुक्म देकर शुक्राना के तौर पर दोगाना (दो रकआत नमाज़) अदा करने की ताकीद फ़रमायी है और यही ईद की अस्ल रूह है, बक़िया जो लवाज़मात है (नहाना–धोना, ख़ुशबू लगाना, नये कपड़े पहनना इत्यादि) ये सब बाद की चीज़ें हैं। आज के दिन का अस्ल काम है कि बन्दे अपने अमल से ज़ाहिर कर दें कि वो वाक़ई अपने रब का फ़रमाबरदार है और इताअत गुज़ार है और ऐसे ही बन्दे को ख़ुशी मनाने का हक़ है।

मगर आज अफ़सोस की बात है कि दूसरी क़ौमों की देखा देखी मुसलमानों ने भी ईद को केवल एक त्योहार समझ लिया है और बन्दगी के इज़हार का जज़्बा ज़हनों से बिल्कुल ख़त्म होता जा रहा है। जैसे ही ईद का चांद नज़र आता है नौजवान लड़के और लड़कियों की टोलियां बाज़ार में निकल पड़ती हैं। दुकानों पर मर्द–औरतों की भीड़ हो जाती है। गाने–बजाने की आवाज़ों की वजह से दूसरी आवाज़ें सुनाई तक नहीं देती। ईद की मुबारक रात मटर गश्तियों में बेकार कर दी जाती है और फिर ईद के दिन भी दो रकआत नमाज़ अदा करने के बाद उन्हीं बेकार के कामों का सिलसिला कई दिनों तक जारी रहता है। सिनेमाहालों और तफ़रीहगाहों की रौनकें बढ़ जाती हैं। ये सूरते हाल ईमान वालों की इस्लामी शान के बिल्कुल ख़िलाफ़ है। अगर हम भी यही तरीक़ा अपनाने लगेंगे तो हममें और ग़ैरों में आख़िर क्या फ़र्क़ बाक़ी रहेगा?इसलिये ज़रूरी है कि ईद को इस्लामी शान के साथ मनाया जाये और ये शान उस वक़्त हासिल हो सकती है जबकि हम अपनी ईद को हर गुनाह और बुराई से बचा रखें और बन्दगी के इज़हार में एक दूसरे से सबक़त ले जाने की कोशिश करें। अल्लाह तबारक व तआला सही अर्थों में हमें अपनी बन्दगी की तौफ़ीक़ अता फ़रमाये। आमीन!

ईद की नमाज़ की शर्तें

बड़े शहरों और क़स्बों में जहां जुमे की नमाज़ की शर्तें पायी जाती हैं (जैसे वहां की आबादी कम से कम तीन हज़ार या ज़िन्दगी की ज़रूरतों का आसानी से उपलब्ध होना इत्यादि) वहां ईद की नमाज़ पढ़ना वाजिब है। अलबत्ता जहां जुमे की नमाज़ की शर्तें न पायी जाती हों वहां ईद की नमाज़ पढ़ना मकरूह तहरीमी है।

- ईद की नमाज़ का वक़्त सूरज निकलने के लगभग पन्द्रह मिनट बाद शुरू हो जाता है। लेकिन नमाज़ का ऐसा वक़्त तय किया जाये कि लोग तमाम तैयारियां करके सहूलियत के साथ ईदगाह में हाज़िर हो सकें।
- ईद की नमाज़ शहर के बाहर निकलकर ईदगाह में पढ़ना सुन्नत है।
- शहर की मस्जिदों में ईद की नमाज़ पढ़ने की इजाज़त है।
- ईदगाह में नमाज़ होने से पहले शहर की मस्जिदों में ईद की नमाज़ बिला कराहत जायज़ है।

ईद की तैयारी

- ईद के दिन नहाना, मिस्वाक करना, अच्छे कपड़े पहनना और खुशबू वग़ैरह लगाना मुस्तहब है।

❍ ईदुल फ़ित्र में ईदगाह जाने से पहले कुछ खाना–पीना मुस्तहब है

❍ ईदुल फ़ित्र में ईद गाह जाने से पहले ताक़ अदद छुआरे या खजूर खाकर जाना मुस्तहब है। अगर ये मयस्सर न हो तो कोई भी मीठी चीज़ खा लेना काफ़ी है। इस मौक़े पर कोई ख़ास शीरीनी साबित नहीं है।

❍ ईदगाह पैदल जाना सुन्नत है और वहां से वापसी में सवार होकर आने में कोई हर्ज नहीं है।

❍ ईद की नमाज़ से पहले घर या ईद गाह में नफ़िलें पढ़ना जायज़ नहीं है, यहां तक कि औरतें भी उस दिन इश्राक़ और चाश्त की नमाज़ उस वक़्त तक न पढ़ें जब तक ईद की नमाज़ जमाअत के साथ न पढ़ ली जाये।

ईद की नमाज़ की नियत

ईद की नमाज़ शुरू करते वक़्त मुक़्तदी के दिल में ये इस्तहज़ार रहे कि मैं क़िब्ला होकर इस इमाम के पीछे दो रकआत नमाज़ अदा कर रहा हूं जिसमें छः ज़ायद तकबीरें हैं। नियत के लिये ये इस्तहज़ार काफ़ी है ज़बान के नियत के कलिमात अदा करना ज़रूरी नहीं है बाक़ी अगर कोई अदा कर ले तो नाजायज़ भी नहीं।

ईद की नमाज़ की तरीक़ा

ईद की नमाज़ का तरीक़ा ये है कि नियत के बाद तकबीर–ए–तहरीमा कह कर हाथ बांध ले, सना पढ़ें, इसके बाद दोनों हाथ उठाते हुए मामूली फ़ासले से तीन बार तकबीर कहें, पहली दो तकबीरों के बाद हाथ छोड़ते रहें और तीसरी तकबीर के बाद हाथ बाधें, इसके बाद सूरह फ़ातिहा और सूरह मिलायें, फिर रुकुअ सजदा करके रकआत मुकम्मल कर लें। दूसरी रकआत में सबसे पहले सूरह फ़ातिहा और सूरह लगाने के बाद रुकुअ में न जायें बल्कि तीन बार हाथ उठाकर तीन तकबीरें कहें और बीच में हाथ न बाधें, इसके बाद बग़ैर हाथ उठाये तकबीर कह कर रुकुअ में चले जायें और बक़िया नमाज़ उसी तरह पूरी करें।

ईद के दिन एक दूसरे को मुबारक बाद देना

ईद के दिन एक दूसरे को मुबारक बाद देना जायज़ है।

ईद की नमाज़ में औरतों के लिये हुक्म

मर्दों की तरह औरतों के लिये भी ईद के दिन मुस्तहब ये है कि वो गुस्ल करें और अच्छे कपड़े पहने क्योंकि ये ख़ुशी और ज़ेब व ज़ीनत का दिन है और अगर चाहें तो ईदगाह या मस्जिद में ईद की नमाज़ हो जाने के बाद अपने घरों में तन्हा–तन्हा बतौर शुक्राना नफ़िल नमाज़ें पढ़ सकती हैं।

ईद की नमाज़ों का ख़ुत्बा

ईद का ख़ुत्बा पढ़ना सुन्नत है जो ईद की नमाज़ के बाद पढ़ा जायेगा।

ईद का ख़ुत्बा तकबीर से शुरु करना

ईद का ख़ुत्बा शुरू करने से पहले 9 तकबीरें लगातार पढ़ना मुस्तहब है।

ईद की नमाज़ में पहली रकआत में ज़ायद तकबीरें भूल जाने का हुक्म

ईद की नमाज़ में पहली रकआत में इमाम ज़ायद तकबीरें भूल गया और सूरह फ़ातिहा का कुछ हिस्सा या पूरी सूरह फ़ातिहा पढ़ने के बाद याद आया तो तकबीर कह कर सूरह फ़ातिहा दोबारा पढ़े, और अगर सूरह फ़ातिहा और सूरह पढ़ने के बाद याद आया तो सिर्फ़ तकबीर कहे किरआत दोबारा नहीं होगी।

ईद की नमाज़ की दूसरी रकआत में ज़ायद तकबीरें भूल जाने का हुक्म

अगर इमाम ईद की नमाज़ में दूसरी रकआत में जायद तकबीरें न कह कर रुकुअ में चला गया तो इस सूरत में रुकूअ ही में हाथ उठाये बग़ैर तकबीर कह ले, खड़े होकर कहने की ज़रूरत नहीं है।

ईद की नमाज़ के बाद दुआ

फ़र्ज़ नमाज़ों के बाद दुआ करना जनाब रसूलुल्लाह स0अ0 से साबित है इसमें ईद की भी नमाज़ें शामिल हैं और बेहतर ये है कि ये दुआ नमाज़ के फ़ौरन बाद ख़ुत्बा से पहले हो, क्योंकि ख़ुत्बा के बाद की दुआ की कहीं सराहत नहीं है।

बारिश की वजह से ईद की नमाज़ को मुअख़्ख़र करनाः अगर किसी वजह से जैसे बारिश वग़ैरह की वजह से ईदुल फ़ित्र की नमाज़ एक दिन छोड़कर दूसरे दिन पढ़ी जाये तो जायज़ है।

ईद की नमाज़ के बाद हाथ मिलाना व गले मिलना

ईद की नमाज़ के बाद गले मिलना या हाथ मिलाना कोई सुन्नत नहीं है, हां अगर किसी से उसी वक़्त मुलाक़ात हो या नमाज़ के कुछ देर बाद हो तो मुलाक़ात की नियत से हाथ मिलाया जाये या गले मिला जाये तो कोई हर्ज नहीं।

अहसन अब्दुल हक़ नदवी

ज़कात

अहकाम व मसाईल

ज़कात इस्लाम का एक ज़रूरी हिस्सा है। कुरआन पाक में जगह–जगह नमाज़ के साथ ज़कात देने पर भी ज़ोर दिया गया है। "आप स0अ0 ने इसे इस्लाम के पांच बुनियादी हिस्सों में से एक बताया है।"

एक हदीस में ये भी इरशाद फ़रमायाः "मुझे हुक्म दिया गया कि लोगों से क़िताल करूं ताकि वो कलिमा शहादत अदा करें, और ज़कात दें।" (बुख़ारीः 1399)

साहब–ए–निसाब (जिसके पास इतना माल हो जिस पर ज़कात वाजिब हो) होने के बावजूद ज़कात न अदा करने वालों को कुरआन पाक में जो सख़्त तरीन वईद सुनाई गयी है उससे रोंगटे खड़े हो जाते हैं। अल्लाह तआला का इरशाद हैः "जो लोग अपने पास सोना–चांदी जमा करते हैं और उसको अल्लाह के रास्ते में ख़र्च नहीं करते तो (ऐ नबी स0अ0) आप उनको दर्दनाक अज़ाब की ख़ुश ख़बरी सुना दीजिये, ये दर्दनाक अज़ाब उस दिन होगा जिस दिन उस सोने और चांदी को जहन्नम की आग में तपाया जायेगा, फिर उसके ज़रिये उनकी पेशानी, उनके पहलू और उनकी पीठ को दाग़ा जायेगा (और उनसे कहा जायेगा) ये है वो ख़ज़ाना जो तुमने अपने लिये जमा किया था, तो आज तुम उस ख़ज़ाने का मज़ा चखो जो तुम अपने लिये जमा कर रहे थे।"

लिहाज़ा हर साहब–ए–निसाब मुसलमान के लिये ज़रूरी है कि वो पूरा–पूरा हिसाब करके ज़कात की अदायगी करे। बहुत से लोग बिना हिसाब के ही कुछ रक़म या दूसरी चीज़ें ग़रीबों को देकर अपने को ज़िम्मेदारी से बरी समझते हैं, ये तरीक़ा सही नहीं है, पूरा हिसाब लगाकर ज़कात देना ज़रूरी है।

सदक़े से माल बढ़ता है

ज़कात अदा करने में एक बड़ा बल्कि बुनियादी कारण ये माना जाता है कि इससे माल की एक बड़ी मात्रा हाथ से निकल जायेगी और उसके बदले में कोई चीज़ नहीं मिलेगी। लेकिन कुरआन मजीद में इस ख़्याल की काट की गयी है और इसका पूरा इत्मिनान दिलाया गया है कि अल्लाह के रास्ते में ख़र्च करने से घटता नहीं है, बल्कि इसमें बढ़ोत्तरी होती है।

एक दूसरी जगह माल ख़र्च करने से जो बेपनाह बरकत व इज़ाफ़ा होता है उसको कुरआन में एक मिसाल देकर समझाया गया है। अल्लाह तआला का इरशाद हैः

"अल्लाह के रास्ते में ख़र्च करने वाले की मिसाल उस बीज की तरह है जिसको जब ज़मीन में डाला जाता है तो ज़ाहिरी आंख ख़ाक में मिलकर ज़ाया होते उसे देखती है, लेकिन फिर होता क्या है? अल्लाह तआला उस दाने से पौधा निकालता है, जिसमें सात बालियां निकलती हैं, और हर बाली में सौ दाने होते हैं, इसी तरह हर दाने से सौ दाने हासिल होते हैं।" (सूरह बक़रह : 261)

यही मामला अल्लाह की राह में ख़र्च करने वालों के साथ होता है कि ज़ाहिरी तौर पर लगता है कि अपना माल ख़राब कर दिया लेकिन अल्लाह तआला दुनिया में भी उस पर बरकतों के दरवाज़े खोल देते हैं, और आख़िरत में भी इंशाअल्लाह उसको कई गुना अज्र व सवाब मिलेगा।

ज़कात वाजिब होने की शर्तें

ये भी ध्यान रहे कि ज़कात न हर व्यक्ति पर फ़र्ज़ होती है न हर माल पर, बल्कि इसके वाजिब होने के लिये उस व्यक्ति का अक़्ल वाला होना और बालिग़ होना, साहबे निसाब होना, माल पर साल गुज़रना, उस माल का कर्ज़ से ख़ाली होना, इसी तरह उसका हाजते अस्लिया (ज़रूरी ज़रूरतें) से ख़ाली होना शर्त है, एक भी शर्त न पायी जाये तो ज़कात फ़र्ज़ नहीं होगी।

ज़कात का माल

जिन चीज़ों पर ज़कात वाजिब है वो बुनियादी तौर पर चार हैं।

1. जानवर
2. सोना
3. चांदी (नक़दी भी सोना और चांदी के हुक्म में आती है)
4. व्यापारिक माल

सोने–चांदी का निसाब

चांदी का निसाब दो सौ दिरहम जबकि सोने का निसाब बीस मिसक़ाल है। हिन्दुस्तान के उलमा की तहक़ीक़ चांदी के दो सौ दिरहम यानि साढ़े बावन तोला (612.360 ग्राम) और सोने के बीस मिसक़ाल यानि साढ़े सात तोला (87.480 ग्राम) के बराबर होते हैं। जहां तक नक़दी और व्यापारिक माल का संबंध है तो उनकी मिल्कियत का अन्दाज़ा भी चांदी के निसाब से किया जायेगा यानि अगर किसी के पास चांदी के निसाब के बराबर नक़द रक़म या व्यापारिक माल है तो वो शरीअत के अनुसार साहबे निसाब है।

फिर ये भी ध्यान रहे कि सोना–चांदी चाहे इस्तेमाल हो रहे ज़ेवर की शक्ल में हो या ग़ैर इस्तेमाली ज़ेवर की शक्ल में हो, चाहे सिक्कों या जुरूफ़ वग़ैरह की शक्ल में हो अगर वो निसाब के बराबर है और उस पर साल गुज़र जाता है तो उसकी ज़कात बहरहाल वाजिब हो जायेगी। यही हुक्म नक़द रक़म का भी है, लेकिन बक़िया दूसरे माल यानि उरूज़ में ये भी शर्त है कि वो व्यापार की नियत से हों, वरना उन पर ज़कात वाजिब नहीं होगी।

हौलान–ए–हौल का मतलब

किसी के पास निसाब के बराबर ज़कात का माल है तो अगर साल के बीच में उस माल में इज़ाफ़ा होता है तो उस ज़ायद माल का हिसाब पहले से मौजूद माल की तारीख़ से किया जायेगा, जब बक़िया माल पर साल गुज़र जाये तो उसकी ज़कात के साथ उस ज़ायद माल की भी ज़कात निकालना ज़रूरी होगा ये नहीं कि हर बढ़ोत्तरी के लिये अलग से साल का हिसाब किया जाये और ये कि साल गुज़रने में अंग्रेज़ी महीनों के बजाये चांद के महीनों का हिसाब किया जायेगा।

किस दिन की मालियत का एतबार होगा

व्यापारिक माल के बारे में गुज़र चुका है कि उन पर ज़कात फ़र्ज़ है। जैसे अगर किसी की दुकान या कोई कारोबार है तो साल गुज़रने के बाद उसके पास जो कुछ नक़दी या सामान है उसकी ज़कात उस पर फ़र्ज़ है और सामान की मिल्कियत लगाते वक़्त उनकी उस दिन की मालियत का एतबार होगा जिस दिन वो उनकी ज़कात अदा कर रहा है।

हाजत–ए–अस्लिया (ज़रुरी ज़रुरतें) का मतलब

जो चीज़ अस्ल ज़रूरतों के लिये हो उसमें ज़कात फ़र्ज़ नहीं होती, अस्ल ज़रूरत की मिसाल में फ़ुक़्हा ने रहने के मकान, पहनने के कपड़े, सवारी के जानवर और गाड़ी, खेती या फ़ैक्ट्री के यन्त्र, और घर के फ़र्नीचर इत्यादि का ज़िक्र किया है।

ज़कात की मात्रा

ज़कात की वाजिब मात्रा किसी भी माल में उसका चालीसवा हिस्सा या ढ़ाई प्रतिशत तय की गयी है।

शेयर पर ज़कात

ज़कात हर प्रकार के व्यापारिक माल पर वाजिब है चाहे वो जानवरों का व्यापार हो या गाड़ियों का व्यापार हो या ज़मीन का और क्योंकि शेयर भी व्यापारिक माल में दाख़िल हैं लिहाज़ा उन पर भी ज़कात फ़र्ज़ है। अगर किसी ने शेयर इस मक़सद से ख़रीदे हैं कि उन पर सालाना नफ़ा हासिल करेगा उनको बेचेगा नही तो उसको अपनी कम्पनी से ख़बर करनी चाहिये कि उसका कितना सामान अचल है जैसे बिल्डिंग और मशीनरी इत्यादि की शक्ल और कितना माल चल है जैसे नक़द कच्चा माल तैयार माल इत्यादि। जितनी सम्पत्ति अचल है उन पर ज़कात नहीं होगी और जितनी सम्पत्ति चल है उन पर ज़कात वाजिब होगी। अगर कम्पनी के माल की तफ़्सील न मिल सके तो इस हालत में एहतियात के तौर पर पूरी ज़कात अदा कर दी जाये। और अगर शेयर इ समक़सद से ख़रीदे हैं कि जब बाज़ार में उनकी क़ीमत बढ़ जायेगी तो उनको ख़रीद करके लाभ कमायेगें तो पूरे शेयर की पूरी बाज़ारी क़ीमत पर ज़कात वाजिब होगी। जैसे आपने पचास रूपये के हिसाब से शेयर ख़रीदे और मक़सद ये था कि जब उनकी कीमत बढ़ जायेगी तो उनको बेचकर नफ़ा कमायेंगे। उसके बाद जिस दिन आपने ज़कात का हिसाब निकाला उस दिन शेयर की क़ीमत साठ रूप्ये हो गयी तो अब साठ रूपये के हिसाब से उन शेयर की मालियत निकाली जायेगी और उस पर ढ़ाई प्रतिशत के हिसाब से ज़कात अदा करनी होगी।

प्राविडेन्ड फ़न्ड पर ज़कात

ज़कात फ़र्ज़ होने की एक अहम शक्ल ये भी है कि उस पर इन्सान का मुकम्मल क़ब्ज़ा भी हो। इसी वजह से ुक़्हा ने फ़रमाया है कि अगर किसी को कर्ज़ दिया और बाद में क़र्ज़ लेने वाला उससे इनकार कर रहा है बज़ाहिर उसका मिलना दुश्वार है या किसी जगह डालकर भूल गया या किसी दरिया इत्यादि में गिर गया तो उन रूपयों

की ज़कात वाजिब नहीं होगी। फिर जब बग़ैर उम्मीद के ये माल मिल जाये तो गुज़रे हुए सालों की ज़कात उस पर वाजिब नहीं होगी। ये रक़म जिस वक़्त मिली है उस वक़्त से उसका हिसाब लगाया जायेगा। (हिन्दिया 1/187)

जहां तक प्राविडेन्ड फ़न्ड का संबंध है तो इसमें एक हिस्सा वो हेाता है जो शासन उसमें मिलाकर देता है। जहां तक इस दूसरी बढ़ी हुई रक़म का संबंध है तो चाहे उसे ईनाम कहा जाये या कर्मचारी की पगार जिसका अभी मालिक नहीं हुआ है, लिहाज़ा उस पर गुज़रे हुए दिनों की ज़कात वाजिब होने की कोई वजह नहीं है। काबिले बहस फ़न्ड का वो हिस्सा है जो मुलाज़िमत के दौरान तन्ख़्वाह से कटकर जमा होता है इसका मामला ये है कि कर्मचारी को इसका मालिक बनाना है। लेकिन उस पर क़ब्ज़ा नहीं हासिल है लिहाज़ा इस रक़म पर भी गुज़रे हुए दिनों की ज़कात वाजिब नहीं होगी। उल्माए मुहक़्क़ीन का रूझान इसी तरफ़ है।

क़र्ज़ का मिन्हा करना

अगर कोई शख़्स निसाब का मालिक है लेनिक वो साथ ही कर्ज़दार भी है तो कर्ज़ के बराबर माल पर ज़कात वाजिब नहीं होगी। अगर क़र्ज़ के बराबर मिन्हा करने के बाद भी निसाब के बराबर माल बच रहा है तो उस पर उसी के बराबर ज़कात वाजिब हो जायेगी।

सोने और चांदी को मिलाना

किसी के पास साढ़े सात तोला (612.480 ग्राम) सोना न हो लेकिन उसके पास कुछ सोना और कुछ चांदी मौजूद हो तो क्या उसके ऊपर ज़कात वाजिब हो जायेगी। इस मसले में दो राय हैं।

1– इमाम शाफ़ई और कई दूसरे हज़रात के नज़दीक उस पर ज़कात वाजिब नहीं होगी। इमाम शाफ़ई ने अपनी किताब अलउम में इस पर बहस की है कि उसके पास न सोने का निसाब है न चांदी का तो उस पर ज़कात कैसे वाजिब हो सकती है जबकि दोनो अलग–अलग जिंस हैं।

2– दूसरी राय हनफ़ी और कई दूसरे लोगों की है कि अगर दोनों के मिलाने से निसाब पूरा हो जाये तो ज़कात वाजिब हो जायेगी। इस पर बहस बुकैर इब्ने अब्दुल्लाह रज़ि0 के असर से कि ज़कात निकालने में सहाबा का तरीक़ा चांदी और सोने के मिलाने का था। फिर दोनों क़ीमत के एतबार से एक ही जिंस हैं। बहरहाल अक़्ली दलील दोनों तरफ़ से मज़बूत हैं लेकिन नक़ली दलील में इस एतबार से फ़रीक़ अव्वल का मोकिफ़ कुछ मज़बूत क़रार दिया जाता है कि हज़रत बुकैर की रिवायत हदीस की किताब में नहीं मिलती। फिर इमाम अबू हनीफ़ा और साहिबैन की दरमियान ये इख़्तिलाफ़ है कि सोने और चांदी को मिलाने की कैफ़ियत क्या होगी।

इमाम अबू हनीफ़ा के नज़दीक दोनों को क़ीमत के एतबार से मिलाया जायेगा। यानि अगर किसी के पास दो तोला सोना और दो तोला चांदी है तो ये देखा जायेगा कि दो तोला सोना अगर बेच दिया जाये तो क्या साढ़े बावन तोला या उससे ज़्यादा चांदी हासिल हो जायेगी। अगर इतनी ज़्यादा चांदी हासिल हो सकती है तो वो साहिबे निसाब माना जायेगा। फ़तवा इमाम साहब के क़ौल ही पर है। जब कि साहिबैन के नज़दीक दोनों को जुज़ के एतबार से मिलाया जायेगा यानि वज़न के एतबार से अगर आधा निसाब सोने का और आधा चांदी या दो तिहाई साने का और एक तिहाई चांदी का या एक चौथाई सोने का और तीन चौथाई चांदी का पाया जा रहा हो तो ज़कात वाजिब हो जायेगी वरना नहीं।

इमाम साहब के मुफ़ता बिही क़ौल के मुताबिक़ अगर सोने चांदी की मामूली मिक़दार भी किसी के पास हो तो वो साहिबे निसाब बन जायेगा और उसके लिये ज़कात लेना जायज़ नहीं रहेगा। इतनी मामूली मिक़दार बिल्कुल मामूली लेागों के पास भी आम तौर से रहती है। इस तनाज़ुर में ये सवाल उठाया जाता है कि क्या मौजूदा हालात में साहिबैन के कौल को अख़्तियार किया जा सकता है। इसलिये कि साहिबैन का क़ौल अख़्तियार कर लिया जाये तो इसमे ज़कात देने वाले और लेने वाले दोनों का ख़्याल हो जायेगा और तवाज़ुन क़ायम रहेगा।

राक़िम के ख़्याल से ऐसा करने की गुंजाइश है। इसलिये कि इस मसले का संबंध हालात के बदलने से है और इस बात पर इत्तिफ़ाक़ है कि हालात बदल जाये तो हुक्म बदल जाता है। फिर ये तो इफ़्ता के हुक्म में भी लिखा हुआ है कि इख़्तिलाफ़ अगर साहिबैन और इमाम साहिब के बीच में तो मुफ़्ती उनमें से किसी पर भी फ़तवा दे सकता है। लिहाज़ा तमाम उलमा का इत्तिफ़ाक़ हो जाये तो इसकी गुंजाहश होगी। फिर इमाम साहब की एक रिवायत साहिबैन के क़ौल के मुताबिक़ भी है लिहाज़ा

इमाम साहब के इस क़ौल को मुस्तहब पर हुक्म लगाकर अमल किया जा सकता है। मुफ़्ती किफ़ायत उल्ला साहब ने किफ़ायतुल मुफ़्ती में इसी तरह हुक्म दिया है।

बात का खुलासा ये है कि व्यापारिक माल वाले मसले में मुफ़्ता बिही हुक्म से हटने की इजाज़त नहीं दी जा कसती जबकि दूसरे मसले में अगर उलमा इत्तिफ़ाक़ कर लें तो इसकी गुंजाइश है।

ज़कात के मुस्तहिक़

ज़कात की हैसियत चूंकि केवल आम इन्फ़ाक़ और इन्सानी मदद की नहीं है बल्कि ये एक अहम इस्लामी इबादत और शरई फ़रीज़ा है, इसलिये शरीअत ने इसके ख़र्च निश्चित कर दिये हैं, अल्लाह तआला का इरशाद है:

"ज़कात फ़क़ीरों, ग़रीबों, आमलीन (ज़कात की जमा व तक़सीम के कार्यकर्ता) दिलजोई, गुलाम, क़र्ज़दार, अल्लाह के रास्तें में (जिहाद करने वाले) और मुसाफ़िरों के लिये, ये अल्लाह की तरफ़ से मुक़र्रर हुआ काम है और अल्लाह बड़ा इल्म वाला और हिकमत वाला है।"

ज़कात के मसारिफ़ (ख़र्च) कुरआन मजीद की ऊपर जिक्र की हुई आयत में तफ़सील से बयान किये गये हैं। इसके संबंध में बात ये है कि ज़कात सिर्फ़ उन्हीं लोगों को दी जा सकती है जो फ़क़ीर या मिस्कीन हों। यानि जिनके पास या तो माल ही न हो या अगर हो तो निसाब तक न पहुंचता हो। यहां तक कि अगर उनकी मिल्कियत में ज़रूरत से ज़्यादा ऐसा सामान मौजूद है जो साढ़े बावन तोला चांदी की क़ीमत तक पहुंच जाता है तो वो ज़कात के मुस्तहिक़ नहीं है। ज़कात का मुस्तहिक़ वो है जिसके पास साढ़े बावन तोला चांदी की मिल्कियत की रक़म या उतनी मालियत का कोई सामान ज़रूरत से ज़्यादा न हो। इसमें भी शरीअत का हुक्म ये है कि मुस्तहिक़ को मालिक बना दिया जाये और वो जिस तरह चाहे उसे खर्च करे। इसीलिये बिल्डिंग की तामीर में ज़कात नहीं लग सकती, न ही किसी इदारे के कर्मचारी की पगार में लग सकती है। इसी तरह कफ़न दफ़न में ज़कात का पैसा लगाना ठीक नहीं है। ज़कात अदा करने वाले को चाहिये कि अच्छी तरह तहक़ीक़ करके सही मसरफ़ में लगाने की कोशिश करे। अफ़ज़ल ये है कि सबसे पहले अपने अज़ीज़ व अक़ारिब में मिस्कीन की तलाश करे। रिश्ते दारों में ज़कात अदा करने से डबल सवाब मिलता है। एक ज़कात अदा करने का दूसरे सिला रहमी करने का।

मुस्तहिक़ होने के साथ साथ एक ज़रूरी शर्त ये है कि मुस्तहिक़ मुसलमान हो। इसीलिये ग़ैर मुस्लिम मुस्तिहिक़ को ज़कात की रक़म देना ठीक नहीं है। आप स0अ0 ने फ़रमाया कि ज़कात मुसलमान मालदारों से ली जायेगी और ग़रीब मुसलमानों पर ख़र्च की जायेगी। (बुख़ारी 1496)

ज़कात निम्नलिखित लोगों को दी जा सकती है:

1– फ़क़ीर (जिनके पास निसाब के बराबर माल न हो)

2– मिस्कीन (जो किसी भी माल के मालिक न हो)

3– इस्लामी हुकूमत के वो कारिन्दे जो ज़कात व उश्र की वसूली पर मुक़र्रर होते हैं।

4– ऐसे गुलाम जो अपनी आज़ादी के लिये मदद के तलबगार हों।

5– ऐसे कर्ज़दार जिनके क़र्ज़ से सबक़दोशी के लिये ज़कात दी जाये जबकि उनके पास अपनी ज़ाति मालियत ज़कात की अदायगी के लिये बाक़ी न हो।

6– वो मुसाफ़िर जो सफ़र के दौरान ज़रूरत मन्द हो जायें।

किन लोगों को ज़कात देना जायज़ नहीं:

1– बाप, दादा, परदादा, नाना, परनाना, इत्यादि। इसी तरह दादी, नानी इत्यादि।

2– लड़के, लड़कियां, पोते, नवासे, पोतियां, नवासियां इत्यादि।

3– बीवी और शौहर।

4– गुलाम बांदी।

5– साहबे निसाब, मालदार।

6– मालदार छोटा बच्चा।

7– सादात (बनू हाशिम, आले अली, आले अब्बास इत्यादि)

मदरसों में ज़कात देने का दोहरा सवाब

मदरसों में ज़कात ख़र्च करने में दोहरा सवाब मिलेगा, एक ज़कात का दूसरे इल्म को फैलाने और दीन की हिफ़ाज़त का।

रमज़ान में ज़कात अदा करने का सवाब

रमज़ानुल मुबारक में चूंकि हर फ़र्ज़ इबादत का सवाब सत्तर गुना बढ़ जाता है इसलिये रमज़ान में ज़कात देने में इन्शाअल्लाह सत्तर गुना सवाब की उम्मीद है। (लेकिन इसका मतलब ये नहीं कि सारी ज़कात रमज़ान में ही निकाल दी जाये और ग़ैर रमज़ान में फ़क़ीरों की ज़रूरतों

का ख़्याल न रखा जाये, बल्कि ज़रूरत व मस्लिहत के एतबार से ख़र्च करने का एहतिमाम करना चाहिये)

एक फ़क़ीर को एक वक़्त में मुकम्मल निसाब का मालिक बनाना मकरुह है

एक फ़क़ीर को एकसाथ इतना माल देना कि वो साहबे निसाब हो जाये बेहतर नहीं है, अलबत्ता अगर वो क़र्ज़दार हो और कर्ज़ की अदायगी के लिये बड़ी रक़म दी तो हर्ज नहीं।

ज़रुरी तम्बीहः कुछ मालदार इस मसले से ग़लत फ़ायदा उठाते हैं, वो इस तरह कि कारोबार या हुकूमत का क़र्ज़ इतना ज़्यादा हो जाता है कि उनके अस्ल सरमाये से बढ़ जाता है तो वो लोगों के पास जाकर ये कहते हैं कि हम क़र्ज़दार होने की वजह से ज़कात के मुस्तहिक़ हो गये। इसलिये ज़कात के माल से हमें क़र्ज़ अदा करने में सहयोग दिया जाये।

इस तरह वो लाखों रूपये की मांग रखते हैं तो ऐसे लोगों को चाहिये कि वो पहले अपनी ज़ाति मालियत जायदाद और गाड़ियां वग़ैरह बेच करके अपना कर्ज़ अदा करें, और इसके बाद भी क़र्ज़ अदा न हो तो अब सहयोग की मांग करें, इससे पहले उनका अपने को ज़कात का मुस्तहक़ कहना ग़रीबों का हक़ मारना है।

यतीम को ज़कात देना

अगर यतीम फ़क़ीर समझदार बच्चे को ज़कात दी यो कपड़े पहनाये तो ज़कात अदा हो जायेगी।

नासमझ बच्चे को ज़कात देना

नासमझ छोटे बच्चे की तरफ़ से उसके बाप या वसी या मुरब्बी ने क़ब्ज़ा कर लिया तो ज़कात अदा हो जायेगी वरना नहीं।

हाशमी को ज़कात देना जायज़ नहीं

हाशमी ख़ानदान और उनके आज़ाद किये हुए ग़ुलामों को ज़कात नहीं दी जायेगी।

उसूल व फुरुअ को ज़कात देना

अपने बाप, दादों, लड़कों और पोतों को ज़कात देने से फ़र्ज़ अदा न होगा।

बीवी शौहर को और शौहर बीवी को ज़कात नहीं दे सकता

क़र्ज़दार के क़र्ज़ को माफ़ करने से ज़कात अदा न होगी

क़र्ज़दार को क़र्ज़ से बरी करने से ज़कात अदा न होगी अलबत्ता अगर फ़क़ीर ने मक़रूज़ को ज़कात की रक़म दी फिर उससे अपना कर्ज़ वसूल कर लिया तो ये दुरूस्त है।

फ़क़ीर समझकर ज़कात दी और बाद में पता चला कि वो मालदार है

अगर किसी शख़्स ने अपनी ज़कात किसी शख़्स को फ़क़ीर समझकर दी, बाद में पता करने से मालूम हुआ कि वो लेने वाला शख़्स ज़कात का मुस्तहक़ न था तो देने वाले की ज़कात अदा हो गयी।

क़रीबी रिश्तेदारों का हक़

क़रीबी रिश्तेदार ज़कात के अहम मुस्तहिक़ीन में से हैं, उनको ज़कात देने में दो गुना सवाब मिलता है, एक ज़कात का, दूसरे सिलारहमी और क़राबत का। ध्यान रहे कि बाप, दादा, औलाद और पति–पत्नी के अलावा बक़िया सभी ज़रूरतमन्द रिश्तेदारों जैसे भाई, बहन, चचा, फुफी, मामू और भांजे इत्यादि को ज़कात देना शरीअत के हिसाब से सही है, बल्कि अफ़ज़ल है।

ज़कात को एक शहर से दूसरे शहर भेजना

बेहतर है कि हर शहर वाले अपनी ज़कात अपने शहर के फ़क़ीरों और ग़रीबों पर ख़र्च करें लेकिन अगर दूसरी जगह के लोग ज़्यादा मुस्तहिक़ हो तो दूसरी जगह ज़कात की रक़म भेजने में भी कोई हर्ज नहीं है। जैसे बहुत से रिश्तेदार ज़रूरतमन्द दूसरे शहर में रहते हों, या बहुत से मदरसे ऐसे पिछड़े इलाक़ों में हैं जहां सहयोग करना दीन के बचाव के लिये ज़रूरी है तो वहां ज़कात की रक़म भेजना न केवल जायज़ बल्कि ज़्यादा सवाब वाला भी है।

शेषः सदक़–ए–फ़ित्र

बड़ी औलाद की तरफ़ से सदक़–ए–फ़ित्रः आक़िल बालिग़ औलाद की तरफ़ से सदक़–ए–फ़ित्र अदा करना बाप पर ज़रूरी नहीं है। अगर वो बच्चे बाप की परवरिश में रहते हों और बाप उनकी तरफ़ से सदक़–ए–फ़ित्र अदा कर दे तो ठीक होगा।

क्या बीवी का सदक़–ए–फ़ित्र शौहर पर हैः बीवी का सदक़–ए–फ़ित्र शौहर पर वाजिब नहीं है लेकिन अगर उसकी तरफ़ से अदा कर दे तो हो जायेगा, चाहे बीवी से इजाज़त ली हो या न ली हो।

सदक़–ए–फ़ित्र रमज़ान में अदा करनाः सदक़–ए–फ़ित्र रमज़ानुल मुबारक में भी देना ठीक है।

शेषः रमज़ान के बाद

रमज़ानुल मुबारक का जो काम व्यक्तिगत जीवन में करना होता है रमज़ान के बाद उसका एक तरह का इजरा आम ज़िन्दगी में करता है। रमज़ानुल मुबारक में रोज़ाना चन्द घन्टों के लिये अपनी पसन्द और ज़रूरत की कई बातों से परहेज़ करना होता है कि प्यासा है लेकिन इतने समय तक पानी नहीं पीना है जबकि पानी हर तरफ़ मौजूद है और दावत ज़ौक़ व तलब दे रहा है। भूख है लेकिन उतने समय तक मुंह में एक निवाला भी नहीं डालता है। घर वालों के साथ है लेकिन उनसे अपनी इच्छा का न प्रकट करना क्योंकि परवरदिगार और मालिक ने मना किया है। इसलिये अपने परवरदिगार और मालिक के हुक्म को पूरा करने के लिये वो सब्र करता है और अपने दिल को भी संभाले रखता है।

अब रमज़ान ख़त्म हुआ और 29 व 30 दिन की ट्रेनिंग से मर्दे मुसलमान गुज़रा तो अब उसके लिये क्या मुश्किल है कि आगे के महीनों में कम मेहनत व सब्र की पाबन्दियों को निभाये और अपने परवरदिगार के हुक्म को माने। वो हराम माल को हाथ न लगाये, अपने लिये जायज़ व हलाल चीज़ों को ही ले और इस्तेमाल करे, उसको कोई इन्सान भी न देखता हो और क़ीमती से क़ीमती माल सामने हो जिसको लेने में उसको कोई ज़ाहिरी रुकावट न हो लेकिन वो न ले इसलिये कि उसका मख़सूस रोज़ा ख़त्म हुआ लेकिन ये आम रोज़ा क़ायम है। जिन्सी एतबार से उसके परवरदिगार ने जो हदें उसको बतायीं हैं उन हदों को पार न करे किसी हराम जगह पर नज़र न डाले और दिल की इच्छा दिल में भी न आये।

मुसलमान की ज़िन्दगी रमज़ान में तो एक ख़ास दायरे में घेर दी जाती है जिसको निभाने पर वो रोज़ादार साबित होता है और उसके लिये उसके बदले में जन्नत की नेमतों की बशारत है। लेकिन ग़ैर रमज़ान में भी उसे बहुत सी पाबन्दियों के साथ रहना होता है और उसके लिये भी जन्नत की नेमतों की बड़ी बशारत है। फूल, फल, पानी, दूध, शहद और राहत के बेशुमार सामान की बशारतें हैं जो हमेशा हासिल होगीं। लेकिन कब?जब परवरदिगार की बतायी हुई और आसान पाबन्दियों को निभाया जाये।

अफ़सोस की बात है कि हम बहुत हद तक रमज़ानुल मुबारक की भूख व प्यास और दूसरी पाबन्दियों को निभा लेते हैं बल्कि पूरे–पूरे महीने और लगातार सालहा साल निभा लेते हैं लेकिन आम ज़िन्दगी में आसान सी पाबन्दियों को कई बार नहीं निभा पाते ये एहतियात कि वो जाएज़ व नाजाएज़ माल में शरई अहकाम के बीच फ़र्क़ करें और जो उनके लिये हलाल नहीं हैं उसको हाथ न लगाएं और किसी का माल या सामान उसकी इजाज़त के बग़ैर न लें।

किसी ग़लत बात को स्वीकार न करें किसी पर आरोप या झूठा इल्ज़ाम न लगाएं किसी को अकारण नुक़सान न पहुंचाएं। अपने ऊपर जो दूसरों के हक़ हैं उनको पूरी तरह अदा करें। इस तरह मुसलमान सिर्फ़ रमज़ान ही के रोज़े का पाबन्द है और मुसलमान का मुसलमान होना इसी वक़्त मुकम्मल होता है जब वो दोनों तरह के रोज़ों की पाबन्दी करे।

शेषः तरावीह की नमाज़

फिर भी रह जायें और इमाम वित्र पढ़ाने के लिये खड़ा हो जाये तो इमाम के साथ पहले वित्र अदा करे उसके बाद अपनी छूटी हुई रकआत पढे। (दुर्रे मुख़्तार 2/431)

लोगों में ये बात मशहूर है कि जिसने फ़र्ज़ नमाज़ जमाअत से नहीं पढ़ी तो वो वित्र की नमाज़ जमाअत के साथ नहीं पढ़ सकता, ये ग़लत मशहूर है, वित्र की नमाज़ जमाअत के साथ पढ़ सकता है, अलबत्ता अगर किसी ने सिरे से फ़र्ज़ नमाज़ पढ़ी ही न हो तो वो पहले फ़र्ज़ नमाज़ पढ़े फिर वित्र की नमाज़।

तरावीह में ख़त्म कुरआन पर उजरत लेना सही नहीं है। इसलिये कि आप स0अ0 ने इरशाद फ़रमाया कि कुरआन पढ़ा करो उसको खाने कमाने का ज़रिया न बनाओ। (मुसन्नफ़ इब्ने अबी शैबा 2/171)

हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने मुग़फ़्फ़ल रज़ि0 ने रमज़ान में लोगों को तरावीह पढ़ाई, जब ईद का दिन आया तो उनकी ख़िदमत में उबैदुल्ला बिन ज़ियाद ने एक जोड़ा पांचा सौ दिरहम पेश किये तो आप ने उन्हें लौटा और फ़रमाया, हम कुरआन मजीद पढ़ने पर उजरत नहीं लिया करते। (मुसन्नफ़ इब्ने अबी शैबा 2/171)

मौजूदा दौर के अकाबिर अहले फ़त्वा ने ये फ़त्वा जारी फ़रमाया है कि तरावीह में ख़त्म कुरआन पर तय करके या बिना तय किये हुए लेन–देन शरीअत के एतबार से जायज़ नहीं है। तमाम विश्वस्नीय फ़त्वे में इसकी व्याख्या मौजूद है। (इमदादुल फ़तावा 1/481)

अबुल अब्बास ख़ाँ

हव्वा की बेटी

हिदायत का सूरज निकले हुए कई साल हो चुके हैं। यसरब अब मदीना के नाम से जाना जाता है। जिसे इस्लामी तालीम ने जन्नत का निशां बना दिया है। इन्सानियत के इतिहास का सबसे आला समाज इसके पहलू में बसर कर रहा। न दिलों में बुग़्ज़ व नफ़रत है न दुनिया की चाह में मुक़ाबला। हर तरफ़ लिल्लाहियत ही लिल्लाहियत है। जिहाद की दास्ताने हैं। ज़िक्र व तस्बीह के नग़्में हैं। अल्लाहु अकबर की सदांए हैं। नेकी के कामों मे एक दूसरे से आगे बढ़ने की चाह है। गरज़ पूरा समाज फ़िक्र–ए–आख़िरत की चादर में लिपटा हुआ है।

लेकिन इस माहौल में एक शख़्स ऐसा भी है जिसके सीने पर एक गुनाह का भारी–भरकम बोझ है। उसकी आखें ख़ुश्की को तरस रही हैं, उसका दिल बेचैन है, उसका दिमाग़ उसे झिझोंड रहा है, अपने गुनाह और गुनाह की संगीनी को सोचता है तो लरज़ उठता है, उसके दिल में एक हवक सी उठती है और उसकी कैफ़ियतें कह रही हैं कि वो अपने गुनाह पर बेहद शर्मिंदा है।

लेकिन दिल को किसी पल चैन नहीं है। गुनाह के तसव्वुर से उसकी रूह कांपती है। आख़िरकार वो ज़ब्त न कर सका। अल्लाह के रसूल के दरबार में हाज़िर हुआ और कहने लगाः "ऐ अल्लाह के रसूल हम जाहिल कौम थे, बुतों को पूजते थे और अपनी औलाद को क़त्ल कर देते थे। ऐ अल्लाह के रसूल, मेरी एक बेटी थी। बहुत ही प्यारी और मासूम सी। मैं जब भी उसे पुकारता वो दौड़ी चली आती। मुझे देखकर वो खुशी से खिल उठती। मुझे अब्बा–अब्बा कहती तो लगता कि फूल झड़ रहे हों। एक दिन मैंने उसे बुलाया वो दौड़ी चली आयी। मैं आगे को चल दिया वो मेरे पीछे आती रही। मैं एक कुएं के पास पहुंचा वो मेरे पीछे ही थी। मैंने उसके हाथ को पकड़ा और घसीट कर उस मासूम को इस कुएं में डाल दिया। वो चीख़ती रही और अब्बा–अब्बा पुकारती रही। ऐ अल्लाह के रसूल उसकी आख़िरी आवाज़ भी अब्बा–अब्बा थी। लेकिन मुझ पर उसका कोई असर न पड़ा। बल्कि मुझे इत्मिनान हुआ कि मुझ पर से एक लकड़ी के बाप होने का दाग़ धुल गया।

ये सुनकर रहमत–ए–आलम स0अ0 की आंखें भर आयीं और आप स0अ0 के आँसुए मुबारक निकल पड़े और पूरी महफ़िल पर एक समा बंध गया।

कहते हैं कि वो जिहालत का दौर था। लोग पढ़ना लिखना नहीं जानते थे, दरिन्दगी और हैवानियत आम थी। इन्सानियत कसमसा चुकी थी और दुनिया हलाकत की कगार पर थी। इसलिये इस दौर में औरतें जानवरों से भी बदतर थीं बल्कि उन्हें इन्सान ही नही समझाा जाता था।

आज इक्कीसवीं सदी का दौर है, ये दुनिया की तरक़्की का दौर है। उलूम व फुनून की गहमागहमी है। सुधार व व्यवहार पर तहक़ीक का सिलसिला है और इन्सान का दावा भी है कि वो बहुत ही सभ्य और बुलन्द अख़लाक़ का हामी है। इसने इस दुनिया से परे एक नयी दुनिया बसाने की कोशिश भी शुरू कर दी है। लेकिन.....

लेकिन लड़कियों की पैदाइश पर आज भी आर महसूस किया जाता है बल्कि दुनिया में आने सेपहले ही उसे हलाक करने के जतन किये जाते हैं। पैदा हो गयी तो ज़िन्दगी भर उसे कोसा जाता है। शादी के बाद जहेज़ के नाम पर जला दिया जाता है। ज़िन्दा बची तो लड़का न जनने पर कड़वी–कसीली बातों के वार किये जाते हैं या उसे बेहैसियत कर दिया जाता है और फिर अपनी करतूतों को, "नयी सभ्यता" के विषय में छिपा दिया जाता है। नयी सभ्यता का ये 'कारनामा' है कि इसने हव्वा की उस बेटी को हवस का सामान बना दिया नौकरी के नाम पर उसे घर से बेघर कर दिया। तरक़्क़ी के दौड़ में उसे कठपुतली बना दिया। कामयाबी के नाम पर पाकदामनी से महरूम कर दिया और सबसे बड़ा दर्द ये है कि औरत के औरत होने का एहसास भी छीन लिया।

रमज़ानुल मुबारक की अहम दुआएं

जब चांद देखें तो ये दुआ पढ़ें:

”اَللهُم اهِلهُ عَلَيُنَا بِالُامُنِ وَالُاِيُمَانِ وَالسلاَمَةِ وَالُاِسُلَامِ

رَبيُ وَرَبكَ اللهُ هِلاَلَ رُشُدٍ وخَيُرٍ“

इफ़्तार से पहले ये दुआ पढ़ें:

”يَا وَاسِعَ الُفَضُلِ اِغُفِرُلِیُ“

इफ़्तार के वक़्त ये दुआ पढ़ें:

”اَللهُم لَكَ صُمُتُ وَعَلیٰ رِزُقِكَ اَفُطَرُتُ “

इफ़्तार के बाद ये दुआ पढ़ें:

”ذَهَبَ الظمَا وَابُتَلتِ الُعُرُوُقُ وَثَبَتَ الُاجُرُ اِنُ شَاءَ اللهُ“

किसी के यहां इफ़्तार करें तो ये दुआ पढ़ें:

”اَفُطَرَ عِنُدَكُمُ الصائِمُوُنَ وَاَكَلَ طَعَامَكُمُ الُاَبُرَارُ

وَصَلتُ عَلَيُكُمُ الُمَلاَئِكَةُ“

तरावीह में हर चार रकआत के बाद ये दुआ पढ़ें:

سُبُحَانَ ذِی الُمُلُكِ وَالُمَلَكُوُتِ،

سُبُحَانَ ذِی الُعِزةِ وَالُعَظَمَةِ وَالُقُدُرَةِ وَالُكِبُرِيَاءِ وَالُجَبَرُوُتِ،

سُبُحَانَ الُحَي الُمَلِكِ الذِيُ لَايَمُوُتُ، سُبوُحٌ قُدوُسٌ رَب الُمَلاَئِكَةِ وَالروُحِ،

لَااِلٰهَ اِلا اللهُ، نَسُتَغُفِرُ اللهَ، نَسُالُكَ الُجنةَ وَنَعُوُذُبِكَ مِنَ النارِ۔

”اَللهُم اِنكَ عَفُو تُحِب الُعَفُوَ فَاعُفُ عَنِّيُ. “

Back inner front June-July

R.N.I. No.
UPHIN/2009/30527

Monthly
ARAFAT KIRAN
Raebareli

Postal Reg. No.
RBL/NP - 10

VOLUME-06

JUNE-JULY 2014

ISSUE-06-07

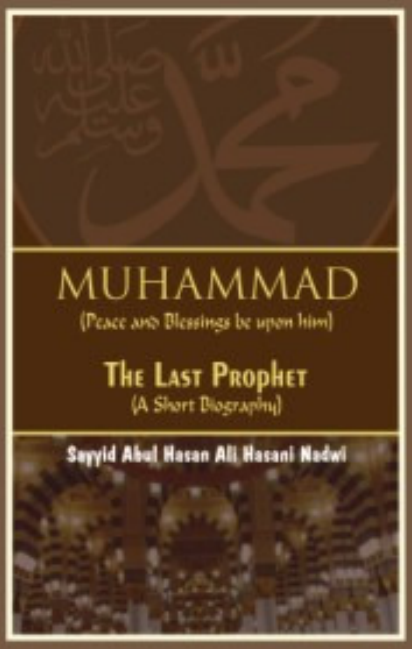

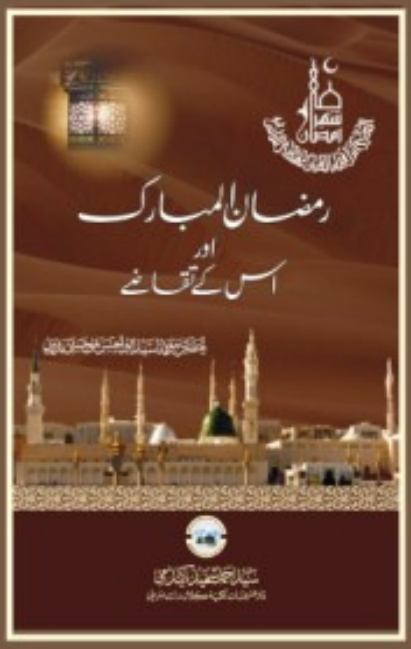

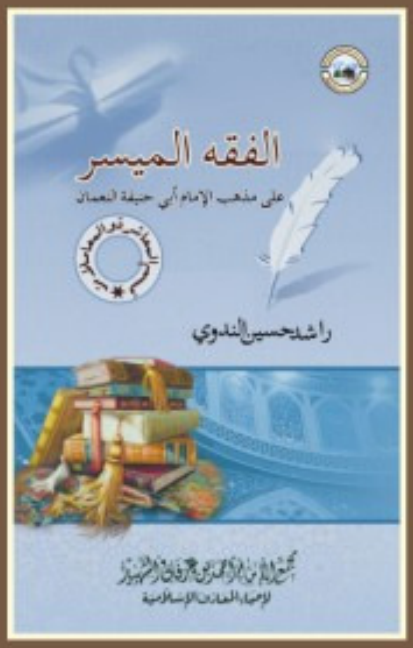

Sayyid Ahmad Shaheed Academy (Contact: 9919331295)

Editor: Bilal Abdul Hai Hasani Nadwi

MARKAZUL IMAM ABIL HASAN AL-NADWI

Dare Arafat, Takiya Kalan, Raebareli, U.P.
Mobile: 9918385097, 9918818558
E-Mail: markazulimam@gmail.com
www.abulhasanalinadwi.org

Printed & Published by: Mohammad Hasan Nadwi
On Behalf of: Markazul Imam Abil Hasan Al-Nadwi
Printed at S.A. Offset Printers, Masjid ke peeche,Phatak
Abdullah Khan, Sabzi Mandi, Station Road, Raebareli, U.P.